संस्कृत–गद्यकाव्य

MAST- 108

खण्ड– 2 – शिवराजविजयम् (प्रथम निःश्वास)

इकाई– 07 आधुनिक गद्यसाहित्य का सामान्य परिचय।

इकाई– 08 पं. अम्बिकादत्तव्यास का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व।

इकाई– 09 संस्कृत गद्यांश का हिन्दी अनुवाद एवं संस्कृत व्याख्या।

(विष्णोर्माया भगवती से आर्यवंश्यांश्चाभिमन्यामहे तक)

इकाई– 10 संस्कृत गद्यांश का हिन्दी अनुवाद एवं संस्कृत व्याख्या

(''उपक्रममुपाकर्ण्य0'' से ''स्वकुटीरं प्रविवेश'' तक)

इकाई– 11 ''शिवराजविजयम्''' से सम्बन्धित आलोचनात्मक प्रश्न।

इकाई – 07

आधुनिक गद्य साहित्य का सामान्य परिचय

इकाई की रूपरेखा–

7.0 प्रस्तावना

7.1 उद्देश्य

7.2 आधुनिक गद्यसाहित्य का सामान्य परिचय

7.3 आधुनिक गद्यकाव्य के भेद

7.0 प्रस्तावना–

परास्नातक संस्कृत (MAST) पाठ्यक्रम के अन्तर्गत आपको पं. अम्बिकादत्तव्यास जी के द्वारा विरचित 'शिवराजविजयः' के प्रथम निःश्वास का अध्ययन करना है। इस ऐतिहासिक गद्यकाव्य के अध्ययन के पूर्व आपको ''आधुनिक गद्यसाहित्य का सामान्य परिचय'' भी प्राप्त करना है; क्योंकि पं. अम्बिकादत्त व्यास की गणना आधुनिक गद्यसाहित्यकार के रूप में होती है। साहित्य का आधुनिक काल लगभग सत्रहवीं शताब्दी से प्रारम्भ होता है। अतः सत्रहवी से लेकर बीसवी शताब्दी के कालखण्ड में जितने कवियों ने साहित्यक्षेत्र में अपनी रचनाएँ की उनका परिचय यहाँ आवश्यक है।

7.1 उद्देश्य –

इस गद्यकाव्य के अध्ययन से पहले आपके मन में यह जिज्ञासा सहज ही होगी कि आधुनिक गद्यकाव्य की उत्पत्ति कैसे हुई। इसका कालखण्ड क्या है? यह जानने के लिये इकाई 7.2 में आधुनिक गद्यकाव्य का सामान्य परिचय दिया जा रहा है। इसमें संस्कृत गद्यकाव्य की उत्पत्ति का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है। इसी खण्ड में गद्यकाव्य के भेदों का एवं उसके मूल स्रोतों का भी संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है; क्योंकि शिवराजविजय की विधा को जानना

अनिवार्य है।

इकाई 7.2 के अन्तर्गत आधुनिक काल में कितने लब्धप्रतिष्ठ गद्यकार हुए और उनका संस्कृत काव्यपरम्परा में क्या योगदान है; इस जिज्ञासा को शान्त करने के लिये लब्धप्रतिष्ठ संस्कृत गद्यकारों का विस्तार से एवं अन्य गद्यकारों का सिंहावलोकन न्याय से परिचय दिया गया है।

संस्कृत के प्रसिद्ध और अल्पप्रसिद्ध गद्यकारों के मध्य पं. अम्बिकादत्त व्यास जी एवं उनकी कृतियों का क्या स्थान है? इस जिज्ञासा को शान्त करने के लिये पं. अम्बिकादत्त व्यास जी के व्यक्तित्व और कृतित्व को भी जानना आवश्यक है गद्यकार के स्थितिकाल और कृतित्व का परिचय 8.2,8.3 एवं 8. 4 में दिया गया है; जिसका अध्ययन अनिवार्य है। इस जिज्ञासा का शमन (इकाई– 8 से) होगा।

गद्यकार ने गद्यकाव्य में समाहित पात्रों का चरित्र–चित्रण कैसे संयोजित किया है; इसे जानने के लिये 8.14 का अध्ययन आवश्यक हो जाता है। वस्तुतः गद्यकाव्य सम्बन्धी साहित्यिक सामग्री गद्यकार की निजी प्रतिभा को उजागर करती हुई उसके कल्पना और यथार्थ के सम्मिश्रण का परिचय देती है। अतः इस दृष्टि से शिवराजविजय का अध्ययन अनिवार्य हो जाता है। इस ग्रन्थ की इकाई 8.14 में पात्रों के चरित्र–चित्रण की झाँकी उजागर की गयी है।

इकाई– 9 में 'शिवराजविजय' के प्रारम्भिक अंशों की संस्कृत व्याख्या और अनुवाद प्रस्तुत किया गया है। इसके अध्ययन से आपकी संस्कृत ज्ञान एवं अनुवाद की क्षमता का विकास होगा। क्योंकि आज के संदर्भ में यह आवश्यक हो जाता है कि संस्कृत का अध्येता सरलशब्दावली में संस्कृत का संस्कृत में और हिन्दी में रूपान्तर कर सके। इस खण्ड में मध्य–मध्य में 'विशेष' के माध्यम से गद्यकार एवं गद्यकार की साहित्यिक सामग्री का कला और सौन्दर्य के माध्यम से परिचय दिया जायेगा। अपनी सफलता हेतु इस प्रकार का अध्ययन करना आवश्यक है। इकाई–9 के अंत में कतिपय बोध प्रश्न दिये गये

हैं। इससे छात्रों का कवि विषयक ज्ञान सुदृढ होगा।

इस पाठ्य क्रम की इकाई –10 में संस्कृत के गद्यांशों का हिन्दी अनुवाद एवं संस्कृत व्याख्या काव्यशास्त्रीय मानकों के अनुसार की जायेगी। अतः इस इकाई का अध्ययन भी आपकी सफलता के हेतु आवश्यक है। इससे छात्रों को काव्यशास्त्रीय व्याख्यापद्धति का भी ज्ञान होगा।

इकाई–11 में शिवराजविजय से सम्बन्धित आलोचनात्मक प्रश्न एवं उनके उत्तर प्रस्तुत किये जायेंगे। इससे छात्रों का गद्यकार सम्बन्धी ज्ञान एवं गद्यकार की काव्यकला का स्थान क्या है ? यह जानने में आपको सहायता मिलेगी; जो आपकी गद्यकाव्य सम्बन्धी रुचि में कभी नहीं आने देगी।

7.2 आधुनिक गद्यकाव्य का सामान्य परिचय

मनुष्य अपने भावों एवं विचारों की भाषिक अभिव्यक्ति के आलोक में जिस शैली का सहज वाणी का उपयोग करता है; उसे संस्कृत साहित्य में गद्यकाव्य का नाम दिया जाता है। यह मानव के भावों की अभिव्यक्ति का एक सहज साधन है। विश्व की प्राचीनतम भाषा वैदिक संस्कृत है यहाँ सर्वप्रथम गद्यविधा का प्रयोग संवादों और कथोपकथन में दिखाई देता है। यजुर्वेदीय गद्य इस काव्य का चूडान्त निदर्शन है। इस यजुर्वेद से आविर्भूत हुए ब्राह्मणग्रन्थों, उपनिषदों और पुराणों तथा सूत्रग्रंथों में गद्य का अजस्र प्रवाह दिखाई देता है। इन ग्रंथों का भाष्य प्राञ्जल भाषा के गद्य का दर्शन कराता है। यही गद्य आगे चलकर गुण, रीति, रस और अलङ्कारों से सुसज्जित होकर अलङ्कृत गद्य के रूप में परिणत हो गया और सहृदय पाठकों के कण्ठहार के रूप में सुशोभित हुआ। रुद्रदामन् का गिरिनार शिलालेख (150 ई), हरिषेण की प्रयागप्रशस्ति या प्रयाग स्तम्भ (350 ई) अलङ्कृत शैली के गद्य की झाँकी को दृष्टिगोचर कराता है।

इस गद्यकाव्य के कथा और आख्यायिका नाम से दो भेद दृष्टिगत होते

है। पूर्वकाल में अष्टाध्यायी (सूत्रों), वार्तिकों और भाष्यग्रन्थों तथा पारिभाषिक ग्रंथों के रूप में पल्लवित यह गद्यकाव्य आगे चलकर दण्डी, बाणभट्ट और सुबन्धु जैसे कवियों के आश्रित होकर अलङ्कृत शैली के गद्य में परिवर्तित हो गया। आचार्य सुबन्धु का प्रत्यक्षर श्लेषमय प्रबन्ध 'वासवदत्ता', आचार्य दण्डी कृत 'दशकुमारचरितम्' और बाणभट्ट कृत ''हर्षचरितम्' आख्यायिका और कादम्बरी जैसी कथा में सहृदय सुधीजनों के मनमयूख को आह्लादित करके समाज को एक प्रौढ़साहित्य प्रदान किया; जो मनोरंजन के साथ ही राजनीतिक, लोकाचार, शास्त्रवैशिष्ट्य आदि विविध विषयों में नैपुण्य के लिये उपयोगी सिद्ध हुआ।

''न कान्तमपि निर्भूषं विभाति वनिताननम्'' (भामहालंकार 1.13) ऐसा काव्यलक्षण करने वाले आचार्य भामहाचार्य की इस उक्ति को इन रचनाकारों ने सार्थक किया। आचार्य दण्डी नें स्वयं भी काव्यादर्श में (2.1) ''काव्यशोभाकरान् धर्मानलंकारान् प्रचक्षते'' कहकर उक्त उद्घोष को प्रमाणित किया। आचार्य दण्डी के काल में अलंकार शैलीमूलक कलापक्ष को काव्य में अधिक प्रश्रय दिया। वक्रोक्ति मार्ग में निपुणं सुबन्धु की वासवदत्ता में स्थान–स्थान पर सभङ्ग और अभङ्ग श्लेषालङ्कार का चमत्कार दृष्टिगत होता है। इसमे प्रकृति–चित्रण, ऋतुवर्णन, प्रभात, संध्या, रात्रि एवं वन, पर्वत, नदी आदि के वर्णन के प्रसङ्ग में उपमा, रूपक, उत्पेक्षा, विरोधभास, परिसंख्या आदि विविध अलङ्कारों का चमत्कार दिखायी देता है। जो सुधीजनों को सहसा ही मुग्ध कर देता है। बाणभट्ट नें भी 'कवीनामगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया' कहकर उसकी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है।

महाराज हर्षवर्धन के चरित्र के रूप में प्राप्त 'हर्षचरितम्' प्रथम उपलब्ध आख्यायिका है; यह गद्य काव्य ओजगुणप्रधान, दीर्घसमासबहुल पदविन्यास से पूर्ण है। आचार्य बाणभट्ट नें इस रचना के उपोद्घात में आदर्श गद्य रचना के लिये नवीन अर्थ, अग्राम्या जाति, सहृदयों को आह्लादित करने वाली स्वभावोक्ति,

सरलश्लेष, स्फुट रस और विकटाक्षरबन्ध इन पाँच तत्त्वों को वांछनीय माना है– ''नर्वोऽर्थो जातिरग्राम्या श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः। विकटाक्षर बन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुष्करम्।'' हर्षचरित–पृ.9

इसी प्रकार 'कादम्बरी' में बाणभट्ट के कवि कर्म कौशल की विविध छटाओं का चूडान्त निदर्शन है। इसमें कादम्बरी का पूर्व भाग बाणभट्ट रचित है; तो उत्तरभाग उनके पुत्र पुलिनभट्ट की। ''कथाख्यायिकाकारा न ते वन्द्याः कवीश्वरा।'' हर्षचरित ''ओजः समासभूयस्त्वमेतद् गद्यस्य जीवितम्।''

''सुबन्ध बाणभट्टश्च कविराज इति त्रयः।

वक्रोक्तिमार्गे निपुणाश्चतुर्थो विद्यते न वा। ''राघवपाण्डवीय– 1.14।

7.3 संस्कृत साहित्य के प्रमुख गद्यकार एवं उनकी रचनायें–

7.2.1 विश्वेश्वर पाण्डे– पं. विश्वेश्वर पाण्डे (1560 से 1610) नें 'मंदारमंजरी' नामक गद्यकाव्य का प्रणयन किया। इनके पूर्वज भारद्वाजगोत्रीय पर्वतीय ब्राह्मण थे; जो मूलतः अल्मोडा जिले के पाटिया ग्राम के निवासी थे। कालान्तर में निःसन्तानता के कारण दुखी होकर इनके पिता पं. लक्ष्मीधर सूरि काशी चले आये थे; जहाँ उन्हें विश्वनाथ के आशीर्वाद स्वरूप एक पुत्र प्राप्त हुआ; जिसका नाम विश्वेश्वर सूरि रखा गया । ये विलक्षण प्रतिभा के धनी थे इन्होंने दशवर्ष की अवस्था से ही काव्यरचना प्रारम्भ कर दी थी। इनके द्वारा विरचित ग्रंथों में कुछ का प्रकाशन 'निर्णयसागर प्रेस बाम्बे' से और कतिपय ग्रंथों का प्रकाशन 'काशी संस्कृत ग्रंथमाला से हुआ था। पं. विश्वेश्वर सूरि न्याय, व्याकरण, काव्यशास्त्र के अद्वितीय विद्वान् थे। इन्होंने ''वैयाकरण सिद्धान्तसुधानिधि'' नामक अष्टाध्यायी की व्याख्या लिखी थी एवं नव्यन्यायदीधिति की टीका के रूप में 'तर्ककुतूहलम्' और 'दीधितिप्रवेश' नामक ग्रंथों की रचना की थी। इसके अतिरिक्त 'अलङ्कारकौस्तुभ', रसचन्द्रिका, अलङ्कार प्रदीप, अलङ्कार मुक्तावली, काव्यतिलक, काव्यरत्न इनके अलङ्कारविषयक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इनके अन्य

ग्रंथों में रोमावलीशतक, आर्यासप्तशती, होलिकाशतक, वक्षोजशतकम्, षड्ऋतुवर्णन और लक्ष्मीविलास उल्लेखनीय हैं। रसमञ्जरी की एक टीका के अंत में एक उल्लेख मिलता है; जिससे प्रतीत होता है कि ये भट्टोजिदीक्षित के पौत्र हरिदीक्षित के काल में वर्तमान थे और हरिदीक्षित इनसे मिले भी थे । (द्र. आचार्य बल्देव उपाध्यायकृत संस्कृतशास्त्र का इतिहास पृ. 410) वस्तुतः मंदारमञ्जरी, विश्वेश्वर की उदात्त और प्रौढ़ रचना है, जो गद्य, पद्यमय भाषा में निर्मित है। यह कादम्बरी की भाँति पूर्व और उत्तर भाग में विभाजित है। इसका नायकं चित्रभानु है और नायिका चंद्रकेतु और चंद्रलेखा की पुत्री मंदारमंजरी, पण्डितराज जगन्नाथ कृत आसफविलास इसी काल की आख्यायिका है; जिसमें पण्डितराज ने अपने आश्रयदाता की प्रशंसा लिखी है; किंतु दुर्भाग्यवश यह रचना अपूर्ण है।

7.3.2 रङ्गनाथ दीक्षित – इनका काल 1650 ई. सन् था इन्होंने गुण मंदारमंजरी' नामक कथा की रचना की है। यह ग्रंथ अद्भुत घटनाओं और रहस्य तथा रोमाञ्च से परिपूर्ण है।

7.3.3 श्रीकृष्णशर्मा– मंदारवती की रचना 1926 ई. सन् में हुई थी। इसमें कवि ने 'मंदारवती' की कथा को उपनिषद्ध किया है; ये इनके आश्रयदाता की रानी थी। श्रीकृष्णशर्मा इनके आश्रित कवि थे।

7.3.4 श्री शैल दीक्षित तिरुमलाचार्य– इन्होंने ''श्रीकृष्णाभ्यदय'' नामक ग्रंथ की दो भागों में रचना की है। यह गद्यविद्या की सांद्र रागात्मक अभिव्यक्ति की रचना है। इनका स्थितिकाल 1809 से 1887 ई. सन् था।

गद्य साहित्य के इस समृद्ध भंडार को कालान्तर में 'तिलकमंजरी' (धनपाल) ने समृद्ध किया। इस ग्रंथ के नायक महाराज जीवनधर हैं। इसक्रम में सकलविद्याचक्रवर्ती (1256 ई.) का ''गद्यकर्णामृत 'आता है। इस ग्रन्थ में ऐतिहासिक और पौराणिक वृत्त का मिश्रण है जिसे तिलकमंजरीसार (1261) वि. सं.) लक्ष्मीधर की तिलकमंजरी (1281) कृष्णाचार्य की 'तिलकमंजरीसंग्रह

(1869 से 1924 ई. सन्) ने और अधिक समृद्ध किया। इसी क्रम में वादीभसिंह कृत 'गद्यचिन्तामणि' (11वीं शताब्दी) का नाम भी उल्लेखनीय है। 15 वीं शताब्दी में वामनभट्टबाण हुए; जिन्होंने 'वेमभूपालचरित' की रचना की इन्होंने नलाभ्युदय, रघुनाथचरितकाव्य एवं पार्वतीपरिणय नाटक भी लिखा था। वेमभूपाल (1450 ई.) इनके आश्रयदाता थे; यह हर्षचरित से प्रभावित रचना है।

आधुनिक गद्यकाव्य का काल 18वीं से 20 वी शताब्दी का माना गया है। इस काल के महाकवियों में 'अहोविल नरसिंह' (1795 ई. सन्) का नाम उल्लेखनीय है। ये राजकृष्णराज के आश्रित कवि थे। इन्होंने बाणभट्ट की शैली का अनुकरण करते हुए 'अभिनवकादम्बरी' लिखी। इसमें इनके आश्रयदाता का चरित्र वर्णित है।

पं. विश्वेश्वर पाण्डे जी ने मन्दारमञ्जरी गद्यकाव्य को कथा ग्रंथ की शैली में लिखा है। ग्रंथ का प्रारम्भ महाकवि ने पूज्यों को नमस्कार करके किया है। साथ ही दुष्टात्मा खलों की माया, पिशुनसंसद् सज्जनों की सत्ता और ब्रह्म की सृष्टि से विलक्षण अनिर्वचनीय महाकवियों की कविता की संस्तुति तथा कुकवियों की निन्दा करते हुए कहा है– ''आद्यैपद्यैर्नमस्कारः खलादेवृत्तकीर्तनम्''।

'मन्दारमञ्जरी' की मूलकथा का प्रारम्भ प्राची दिशा से होता है जहाँ मगध में स्थित पाटलिपुत्र अथवा पुष्पपुर नामक नगर है; यहाँ पल्लववंशी राजशेखर का शासन था। इनकी रानी मलयवती थी। राजा के यहाँ शास्त्रीय और व्यावहारिक गुणों से युक्त बुद्धिनिधि नामका प्रधान अमात्य था। अत्यन्त प्रतापी वह राजा सन्तान के न होने से दुखी रहता था। एक दिन राजा को एक स्वप्न आता है; जिसमें पुत्रीय यज्ञानुष्ठान करवाने का उसे निर्देश मिलता है। राजा के वैसा ही करने पर मलयवती गर्भवती हो जाती है। पुत्रजन्म के पश्चात् राजा जातकर्मादि विविध संस्कारों को सम्पन्न करता है। बालक का नाम चित्रभानु रखा जाता है। राजकुमार समस्त विद्याओं को ग्रहण करता है।

सर्वशास्त्रनिपुण अमात्य बुद्धिनिधि चित्रभानु को समस्त आवश्यक शिक्षाएँ

देता है। एक समय जब राजा राजकुमार के साथ सभामण्डप में बैठा होता है तब इन्द्र का सारथि मातलि अपने स्वामी के रथ को लेकर पृथ्वी पर आता है और राजा को इन्द्र का संदेश सुनाता है। उसका सन्देश पाने के पश्चात् राजा उदयगिरि , काञ्चनाञ्चल, जम्बूपादप, जम्बूसरित, अमरावती, गन्धमादनपर्वत होते हुए कैलास पर्वत पर पहुँचता है। वह अपने समस्त परिवार के साथ लोहितशैल, वैद्युत पर्वत, सरयू नदी और शिवगिरि को देखते हुए गृत्समद ऋषि के आश्रम में प्रवेश करता है। जहाँ उसे इन्द्र (पुरन्दर) के दर्शन होते हैं। वहाँ स्थित विन्दुसरोवर के तट पर वह चित्रभानु गन्धर्वराज चित्रसेन की पुत्री मदयन्तिका से मिलता है; जो अपनी सखी विद्याधरेन्द्र चन्द्रकेतु की कन्या 'मंदारमंजरी' को उसे दिखाती है।

'मन्दारमञ्जरी' के पूर्वभाग का प्रारम्भ 28 आर्या छन्दों से किया गया है। आचार्य विश्वेश्वर पाण्डेय नें परमात्मा, ताण्डवनृत्य में सन्नद्ध शिव, गौरी, गणेश, लक्ष्मी एवं वाग्देवी सरस्वती की वन्दना की है। देववन्दना के पश्चात् कवि नें वाल्मीकि एवं वेदव्यास को प्रणाम किया है। इसके पश्चात् श्लेष के माध्यम से महाकवि कालिदास की प्रशंसा निम्नाङ्कित श्लोक के माध्यम की गयी है। कविता और काली के श्लेष के चमत्कार से पूर्ण एक श्लेषयुक्त छंद का प्रयोग हुआ है–

''नेत्राग्नमित्रा कुमारसूर्जनितमेघरघुभावा।

कवितामिश्रेण काली यशंगता कालिदासस्य।।''

आशय यह है कि कुमारसम्भव, मेघदूतम् और रघुवंशम् जैसे काव्यों को जन्म देने वाली कविता के बहाने भगवती काली कालिदास की वशवर्ती हो गयी हैं।

इसी प्रकार भवभूति के वैशिष्ट्य का वर्णन करता हुआ कवि कहता है कि भवभूति के वियोग और मर्यादा को संरक्षण प्रदान करने वाली वाणी के

रचना रूपी पुष्पगुच्छ के यथार्थत्व का परिमार्जन स्वयं ब्रह्मा भी नहीं कर सकते–

भवभूतेर्विच्छित्तिव्यभिचारमुचो गिरां गुम्फाः।

विधिना दुर्निवारं तेषां खलु भावभूतत्वम्।।

(मन्दारमंजरी, प्र, श्लोक. 9)

इसी प्रकार बाणभट्ट को संस्तुति में कवि कहता है कि यद्यपि इस भूतल पर बहुत से कवियों ने अपनी वाणी से वाग्देवी की उपासना की; तथापि बाणभट्ट नें परिशीलनमात्र न करके माँ सरस्वती के साथ अपने को आत्मसात् कर दिया; फलतः वाणी स्वयं स्त्रीत्व का त्यागकरके पुरुष रूप में बाणभट्ट का रूप धारण करके अवतरित हुई है। यह बात गोबर्धनाचार्य नें भी ''वाणी बाणो बभूव'' कहकर प्रमाणित की है।

परिशीलतितैव सरसं कविराजैर्बहुभिरिव बाग्देवी।

बाणेन तु वैजात्यात्कथयति नामैव वाणीति।।

(मन्दार. प्र. श्लोक 11)

वस्तुतः कार्यकारणभाव के ज्ञान के बिना अनुमानादि का और बाध्यबाधकभाव के ज्ञान के विना विरोधाभास आदि अलङ्कारों का एवं सादृश्यज्ञान के विना उपमा का और आहार्यज्ञान के विना रूपकादि अलङ्कारों का वास्तविक रसास्वाद नहीं हो सकता। इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिये आचार्य विश्वेश्वर ने 'मंदारमंजरी' नामक गद्यकाव्य की रचना की है।

इस ग्रंथ में लौकिक पदार्थों के वर्णन के द्वारा दर्शनशास्त्रीय पदार्थों का एवं लौकिक पदार्थों का प्रतिपादन किया गया है। इन्होंने व्याकरणशास्त्र को सभी शास्त्रों का उपकारक माना है। ''काणादं पाणिनीयञ्च सर्वशास्त्रोपकारकम्''। वस्तुतः इस उक्ति को ध्यान में रखकर कवि ने सादृश्य सम्बन्ध का अनुसरण करते हुए कुसुमपुर के वर्णन के प्रसङ्ग में प्रमाण–प्रमेय आदि दार्शनिक पदार्थों

का वर्णन किया है।

मंदारमंजरी का मुख्य वैशिष्ट्य कथानक का आदि से अन्त तक अजस्र प्रवाह है। यद्यपि उपकथायें भी मूलकथा में मिलती हैं; तथापि कथा का प्रवाह उत्तरोत्तर समृद्ध होता गया है। यह कादम्बरी की अपेक्षा इसकी कथा का वैशिष्ट्य है। कादम्बरी से प्रभावित होने पर भी कवि ने यहाँ सर्वत्र नवीनता लाने का प्रयास किया है। इस गद्यकाव्य में श्लेषनिष्ठ उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, व्यतिरेक, विरोधाभास, परिसंख्या आदि अलङ्कारों का यथेष्ट मात्रा में प्रयोग हुआ है। इनकी छटा निम्नाङ्कित पङ्क्तियो' में द्रष्टव्य है– ''यस्मिन् सर्वोत्तरपुण्यचरितत्नाकरे शासति महीं गुणच्छेदो अङ्गप्रचारो गणितागमेषु, वर्णव्यत्ययः सात्त्विकभावेषु, सङ्करोऽलङ्कारेषु वैषम्यं छन्दप्रभेदेषु जातिनिराकरणं सौगतसिद्धान्तेषु, ईश्वरद्वेषो मीमांसकेषु, करग्रहणं विवाहविधिषु न ब्राह्मणेषु ... द्विजपरीक्षणं लक्षणविचारेषु न दानेषु श्रुतिलङ्घनं वधूनां कटाक्षेषु न जनेषु समभवन्।''

आचार्य विश्वेश्वरपाण्डे नें अपने गद्यकाव्य में दिखाया है कि मंदारमंजरी और चित्रभानु का अनुराग उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होता है। कथा के पूर्वभाग की यहीं समाप्ति हो जाती है।

आचार्य विश्वेश्वर पाण्डे यद्यपि सुबन्धु और बाणभट्ट की कृतियों से प्रभावित थे; तथापि उन्होंने यह उद्घोषणा स्वयं की है कि मंदारमंजरी समस्त काव्यों से विचित्र होगी। जैसा कि उन्होंने मंदारमंजरी की प्रस्तावना में कहा है–

विशकलितैः परकीयैः पदार्थजातैः स्वकाव्यविन्यस्तैः।

याचितकमण्डनैरिव न भवति शोभा विजातीया।।

आचार्य विश्वेश्वर का अभिमत है कि विद्वानों के अंत करण से उद्भूत काव्यमयी वृत्ति मालिन्य दोष से रहित होने के कारण स्वच्छ होती है। फलतः

यथार्थतः आत्मप्रतीत के बोधक चैतन्यसूचक अर्थ का स्फुरण होता है। वे कहते हैं–

काव्यमयी विबुधानामन्तःकरणस्य वृत्तिरमलेयम्।

अर्थश्चैन्यमपि प्रतिफलति यथार्थतो यत्र।।

आशय यह है कि मन्दारमंजरी अन्य कवियों से अप्रभावित एक विलक्षण रचना है। इसकी प्रशंसा करते हुए पं. तारादत्त पंत जी कहते है– ''मन्दारमंजरी तु अतीवरुचिरा लौकिकशास्त्रीय व्यवहारवर्णनपरा कादम्बरीतोऽपि विलक्षण वासवदत्तायाअपि विचित्रा।''

मंदारमंजरीकथानक का वैशिष्ट्य यह है कि संस्कृत के गद्यकाव्यों में लौकिक पदार्थों के वर्णन प्राधान्य को देखते हुए विश्वेश्वर इस समस्या से अनभिज्ञ नहीं थे कि दर्शन के कार्यकारणभाव, व्याप्यव्यापकभाव तथा बाधकबाध्यभाव एवं प्रमाणादि गंभीर पदाथों को सुगमता सरलता से काव्य द्वारा कैसे प्रस्तुत किया जाय; जिससे दर्शन के अध्ययन से विमुख सुकोमलमति वाले पाठकों को काव्य के माध्यम से इन दार्शनिक पदार्थों का ज्ञान कराया जा सके। उनका मानना था कि उक्त दार्शनिक पदार्थो के ज्ञान के विना काव्य का आस्वाद लेने वाले सुधीजन काव्यशास्त्रीय अलङ्कारों के यथार्थ रसास्वाद से वञ्चित रह जाते है।

इस कृति में लघु एवं दीर्घ उभयविध वाक्यों का प्रयोग किया है। यत्र–तत्र समासबहुला पदावली का प्रयोग भी दृष्टिगत होता है किन्तु सामाजिक पदों की आयोजना श्रमसाध्य नहीं है– यह बात गद्य की कमनीयता और प्रौढता के द्वारा काव्य को प्रशंसनीय बना देती है। संवादों में भाषा का प्रवाह कहीं बाधित नहीं हुआ है। निस्संतानता और पाताललोक की ओर भागे दानवेन्द्र के विनाश की चिन्ता से ग्रसित राजा और अमात्यबुद्धिनिधि की मन्त्रणा में भाषागत सौन्दर्य का प्रवाह दर्शनीय है–

''विज्ञातमप्येतदार्यस्य स्मार्यते इह किल कर्मणा विच्छेदेन प्रतीयमाने संसारे जीवानां सुखादुःखान्यतदनुरूपशरीरग्रहः समुल्लसति, यत्तु पित्र्यं तृतीयं ऋणम् रभोगाय तत्पुत्र मात्रपरिहार्यमिति तद् बद्धोऽहं सकलातिशायिनी अपि सम्पदामिमां न बहुमन्ये, सम्पदो हि चलप्रायाः कालक्रमेणाविर्भवन्ति तिरोभवन्ति च, तासां हि सद्भावे सुखविशेषोऽभावे तु न कश्चिदपि अनिष्टलेशः'..... इत्यादि।''

इस ग्रन्थ की शिक्षाएँ कुमार चित्रभानु को मंत्री बुद्धिनिधि का उपदेश कादम्बरी के 'शुकनासोपदेश की स्मृति को जागृत कर देता है। विद्याग्रहण के समय कुमार को बुद्धिनिधि के द्वारा मानव की स्वाभाविक प्रवृत्ति, चञ्चलता, स्नेह राजोचित आदेश, स्वामिभक्ति, स्वाधिकार इत्यादि के सम्बन्ध में राजकुमार को उचित परामर्श शास्त्रीय और लोकव्यवहार के ज्ञान से परिपूर्ण है।

प्रकृति वर्णन– मंदारमंजरी में कवि नें स्थान–स्थान पर चन्द्रोदय रात्रि, प्रभात, सन्ध्या आदि प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन किया है। महाकवि नें प्रकृति को भावोद्दीपक के रूप में चित्रित किया है। विरहवेदना से व्याकुल मदयन्तिका संध्याकाल का वर्णन करती हुई कहती है– ''ततः स्वल्पसमयमात्रावस्थायिनी रामबहुला मदीया जीवन संभावनेवाविर्भवति सन्ध्या, किञ्चिन्मात्रसंचारिणो मदीयाः प्राणाः इवा प्रेम्णः मन्दतामगाहन्त, विरलायमानप्रकाशो मदीयकल्पनाभिनिवेश इव विरराम दिवसः, तत्तदनुपपत्तिसन्धानेन प्रियतमलाभसंभावनेवोद्गच्छता तमसा तिरोधीयत माहेन्द्री हरित.....।'' सरसीभूतं च मत्सर्वाङ्गमिव वारिसमवायजाड्यम्।।''

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि मंदारमंजरी' विश्वेश्वरपाण्डे जी की गद्यकाव्यमयी उदात्त एवं प्रौढ रचना है। काव्यसौन्दर्याधायक गुणों से विभूषित यह रचना लोकप्रियता के योग्य है। इस कृति के प्रणयन में यद्यपि आचार्य विश्वेश्वर पाण्डे जी बाणभट्ट की कादम्बरी से प्रभावित हैं, तथापि उन्होंने इस गद्यकाव्य में सर्वत्र नूतनता लाने के लिये श्लाघनीय प्रयास किया है; जो परवर्ती कवियों के लिये अनुकरणीय है।

7.4 हृषीकेश भट्टाचार्य– पं. हृषीकेश भट्टाचार्य की 'प्रबन्धमंजरी' 11 निबन्धो के संग्रह के रूप में प्रकाशित हुयी है। इस ग्रंथ की शैली वैदर्भी है। इसकी भाषा ओजगुण से पूर्ण एवं प्रवाहमयी है। यद्यपि इसमें' दीर्घसामासिक पदों का प्रयोग हुआ है; तथापि पदविन्यास सरल और सुबोध है। आधुनिक गद्यकारों में इन्हें सम्मानजनक स्थान प्राप्त है।

7.5 पण्डिता क्षमाराव– पण्डिता क्षमाराव का जन्म 4 जुलाई 1890 ई. सन् में हुआ था। इन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की थी। इनकी मृत्यु 1954 ई. सन् में हुई थी। इनके तीन कथासंग्रह अद्यावधि प्रकाशित है। इनका कथापञ्चक 1933 ई. में प्रकाशित हुआ; तो ग्राम ज्योति 1954 में तथा कथामुक्तावली 1956 में प्रकाशित हुई। इन्होंने 1 एकांकी नाटक एवं तीन अङ्क वाले नाटक, 4 जीवन चरित लिखे हैं। इनकी ''महात्मा गाँधी की जीवन कथा'' दो भागों में प्रकाशित है। अपनी कथाओं में इन्होंने समसामयिक समस्याओं को उठाया है। देशप्रेम, स्त्रीशिक्षा, विश्वबन्धुत्व, अहिंसा, सत्याग्रह, विधवा विवाह, सती प्रथा जैसे ज्वलंत मुद्दों को इन्होंने अपनी कथाओं का विषय बनाया है। इन्होंने स्वयं भी आजीवन धर्मान्धता का पूरी निष्ठा से विरोध किया है।

7.6 अम्बिकादत्त व्यास– ये 18 वी शताब्दी के अद्वितीय विद्वान् थे। वस्तुतः विश्वेश्वर पाण्डे के बाद 18 वी और 20 वीं शताब्दी में लिखे गये गद्यकाव्य आधुनिक उपन्यासों से सर्वाधिक साम्य रखते है। पं. अम्बिकादत्त व्यास का स्थितिकाल 1858 से 1900 ई के मध्य था। इन्होंने हिन्दी तथा संस्कृत दोनों भाषाओं में अनेक रचनाएँ की। वस्तुतः 'शिवराजविजय' कादम्बरी के साथ ही बाग्ला उपन्यासों से भी प्रेरित है। स्वय पं. अम्बिकादत्त व्यास जी ने इसें उपन्यास कहा है। इस रचना पर बाणभट्ट की गद्यशैली और वर्णना कला का पूर्ण प्रभाव है। तीन विरामों में विभाजित इनके 'शिवराजविजय' ग्रंथ का प्रत्येक विराम चार निःश्वासों में पुनः विभक्त हुआ है। इस ग्रंथ की उपयोगिता को देखते हुए प्रायः सभी विश्वविद्यालयों नें अपने पाठ्य क्रम में इस

महनीय ग्रंथ को शामिल किया है।

शिवराजविजय का गद्यकाव्य में स्थान– यह गद्यकाव्य एक ऐतिहासिक गद्यकाव्य है; जो उपन्यास विधा में लिखा गया है। इसका प्रधान रस वीर है; अन्य रस उसके अङ्ग के रूप में यथास्थान प्रवाहित होते हैं। इसके नायक महाराष्ट्रगौरव वीर शिवाजी है और प्रतिनायक बीजापुरशासक अफजलखान हैं। प्रभावशाली संवादयोजना इस गद्यकाव्य एक अन्य विशेषता है। इस ग्रंथ की रचना में सस्कृत कवियों को एक नूतन दिशा प्रदान की है। आगे चलकर यह काव्य परवर्ती गद्यकाव्यकारों का पथ प्रदर्शक बना। इसका अनुकरण करते हुए नासिक के निवासी मेधाव्रत कविरत्न नें 'कुमुदिनीचन्द्र' नामक उपन्यास की रचना की । इसी प्रकार बंगलौर निवासी राजम्मा ने 'चन्द्रमौलि' नामक उपन्यास लिखकर सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार किया। पं. अम्बिकादत्त व्यास नें ग्रंथ के प्रारम्भ में जहाँ सूर्य की महिमा और स्वरूप का वर्णन किया हैं। वहीं आगे चलकर जगह जगह हनुमान मंदिर का वर्णन किया है। इस वर्णन का संदेश यह है कि उत्पीडन के प्रतिरोध एवं रक्षा के लिये बल और बुद्धि के देवता हनुमान् आराध्य देव हैं।

व्यास जी ने अपने पूर्ववर्ती कवियों की कृतियों एवं शैली से प्रभावित होने पर भी जागरूक साहित्यकार होने से युगीन आधुनिकता की उपेक्षा नही की है। अतएव पूर्ववती गद्यपरम्परा का अनुकरण करते हुए भी शिवराजविजय को औपन्यासिक विधा से सज्जित कर सर्वथा नूतन विधा के रूप में प्रस्तुत किया है। इसे वस्तुतः बाणभट्ट और दण्डी की शैलियों से समन्वित मापदण्डों और आधुनिक मापदण्डों का एक मञ्जुल सम्मिश्रण कहा जा सकता है। आधुनिक साहित्य के समीक्षकों ने व्यास जी को अभिनव बाण की पदवी से विभूषित किया है – ''व्यासस्तु अभिनवो बाणः।'' यदि हम पं. अम्बिकादत्त व्यास को अलङ्कृत शैली के गद्यकार महाकवि बाण का सच्चा उत्तराधिकारी मानें तो; यह अतिशयोक्ति न होगी। पं. अम्बिकादत्त व्यास जी के व्यक्तित्व और

कृतित्व पर आगे विस्तार से चर्चा होगी।

इनके अतिरिक्त आधुनिक संस्कृत गद्यकारों ' में चक्रवर्ती राजगोपाल' जी का नाम भी उल्लेखनीय है। इन्होंने शैवालिनी, कुमुदिनी, विलासकुमारी तथा सगर नामक चार उपन्यास लिखे हैं। इसी क्रम में, 'जयन्तिका' के लेखक जग्गू अलङ्कार, 'कुमुदिनीचन्द्र' उपन्यास के लेखक मेधाव्रत आचार्य , 'विद्वत्चरितपञ्चकम्' (जीवनचरित) के लेखक नारायण शास्त्री, लोकमान्यतिलक चरित के रचयिता वामन चितले, 'कथासंवर्तिका' के प्रणेता भगीरथ त्रिपाठी, गणपतिशास्त्री का सेतुयात्रावर्णनम् (यात्रावर्णनम्), राम जी उपाध्याय की 'द्वासुपर्णा' (उपन्यास), पं. रामशरण त्रिपाठी की 'कौमुदीकथाकल्लोलिनी एवं हरिदत्त पालिवाल की रूसी कथाओं के संस्कृत अनुवाद भी आधुनिक गद्य साहित्य के अप्रतिम पुष्प हैं।

बोधप्रश्न

1. गद्यकाव्य के कितने भेद संस्कृत साहित्य में प्रयुक्त हैं?
2. शिवराजविजय किस शैली का गद्यकाव्य है ?
3. क्या शिवराजविजय को ऐतिहासिक उपन्यास कहा जा सकता है ?
4. कथा और आख्यायिका में क्या अन्तर है ?
5. 'अभिनवबाण' की उपाधि किस गद्यकार को दी गयी है ?
6. शिवराजविजय की रचना किस कालखण्ड में हुई थी ?
7. संस्कृत गद्यकाव्य की महिला कवियित्री कौन–कौन हैं ?
8. आचार्य विश्वेश्वर की रचना का क्या नाम है?
9. आचार्य रङ्गनाथ दीक्षित ने किस कथा की रचना की है ?
10. मंदावती के रचयिता कौन हैं ?
11. श्रीशैलदीक्षिततिरुमलाचार्य की गद्यरचना का क्या नाम है ?
12. पण्डितराज जगन्नाथ ने किस आख्यायिका की रचना की है ?

इकाई–8

पं. अम्बिकादत्तव्यास का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

इकाई की रूपरेखा–

8.1 प्रस्तावना

8.2 स्थितिकाल

8.3 शिक्षा

8.4 साहित्यसाधना

8.5 अम्बिकादत्तव्यास जी का कृतित्व

8.6 व्यास जी की प्रमुख रचनायें

8.7 शिल्पविधान

8.8 भाषा–शैली

8.9 सामाजिक चित्रण

8.10 प्रकृति चित्रण

8.11 पात्र योजना

8.12 पात्रचित्रण

8.1

संस्कृत साहित्य के विशालतम आकाश में पं. अम्बिकादत्त व्यास जी का नाम देप्दीयमान नक्षत्र की भॉति आलोकित है। अपनी अकुण्ठित प्रतिभा के सामर्थ्य से पं. अम्बिकादत्त व्यास जी को गद्यविधा में अप्रतिम ख्याति प्राप्त हुई। यद्यपि इन्होंने बाणभट्ट की परम्परा का निर्वाह किया है, तथापि ये अपनी मौलिकता, सुबोधकता, इतिहासबोध आदि वैशिष्ट्यों के कारण विद्वन्मण्डली

को आकृष्ट करने में समर्थ हुए हैं। इन्होंने अपनी हृदयग्राह्य शैली से गद्यकाव्य का हिंसक पशुओं से युक्त जंगल कहने वाले आलोचकों को करारा उत्तर दिया है। ऐतिहासिक गद्यकाव्य की विधा को लोकप्रिय बना देना व्यास जी के चातुर्य को दर्शाता है। व्यास जी का यह गद्यकाव्य उन्नीसवीं शती में लिखे गये उपन्यासों की विधा के समीप है।

8.2. स्थितिकाल–

पं. अम्बिकादत्त व्यास जी का जन्म चैत्र शुक्ल अष्टमी को विक्रमसम्वत् 1915 अर्थात् 1858 ईस्वी सन् में हुआ था। ये विलक्षण प्रतिभा से सम्पन्न थे। इनके पूर्वज मूलरूप से जयपुर के ''रावतजी की धूला'' नामक ग्राम से काशी आये थे। इनके पूर्वज आदिगौड पराशरगोत्र के यजुर्वेदी ब्राह्मण थे। इनके प्रपितामह श्रीगोविन्दराज जी थे। ये राजस्थान के राजा मानसिंह के द्वितीयपुत्र दुर्जनसिंह के वंश में उत्पन्न दलेल सिंह के राजपण्डित थे। पं. गोविन्दराज जी के प्रपौत्र राजाराम जी तीर्थयात्रा हेतु काशी आये थे और काशीवासियों के आग्रह के कारण मानमन्दिर मुहल्ले में स्थायी रूप से निवास करने लगे थे। पं. राजाराम जी के ज्येष्ठपुत्र पं. दुर्गादत्त जी संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओं में विद्वत्तापूर्ण लेखन करते थे। इनका विवाह जयपुर में हुआ था। पं. अम्बिकादत्तव्यास इनके द्वितीयपुत्र थे। ये भी हिन्दी और संस्कृत दोनों भाषाओं में लेखनकार्य करते थे। पं. अम्बिकादत्त व्यास बारह वर्ष की अल्पायु से ही कविगोष्ठियों में सम्मिलित होने लगे थे। इसी काल के लब्धप्रतिष्ठ महाकवि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एक कविगोष्ठी में इनकी समस्यापूर्ति से मुग्ध हो गये थे; अतएव अपना वरदहस्त व्यास जी पर उन्होंने सदैव बनाये रखा।

8.3 शिक्षा–

पं. अम्बिकादत्त की शिक्षा–दीक्षा काशी में ही सम्पन्न हुई थी। उच्चशिक्षा काल में इन्होंने काव्यशास्त्र और साहित्यदर्पण का अध्ययन ताराचरण तर्करत्न

जी से किया। न्यायशास्त्र का ज्ञान कैलाशचन्द्र भट्टाचार्य और कुञ्जलाल बाजपेई से प्राप्त किया। आयुर्वेद और सांख्यदर्शन का अध्ययन राममिश्रशास्त्री जी से किया और विश्वनाथ कविराज जी से बांग्लाभाषा सीखी। इनका विवाह 13 वर्ष की अल्पायु में ही हो गया था। 16 वर्ष की अवस्था में इनकी माता का और 22 वर्ष की अवस्था में इनके पिताजी का स्वर्गवास हो गया था। छोटे भाई के निधन के पश्चात् गृहस्थी के संचालन का दायित्व भी इनके ऊपर आ गया था। ऐसी विषम परिस्थिति होते हुए भी साहित्य साधना में कोई बाधा नहीं आयी; इन्होंने इसी कालावधि में अनेक ग्रंथो की रचना कर डाली। साहित्यरचना काव्यलेखन में इनकी गति अप्रतिहत थी। इन्होंने एकरात्रि में ही द्रव्यस्तोत्र की रचना कर डाली। एक घडी में 100 श्लोक बना देने के कारण इन्हें ''घटिकाशतक' की उपाधि मिली थी। पं. अम्बिकादत्तव्यास जी आजीवन संस्कृत और सनातन का प्रचार करते रहे।

8.4 साहित्यसाधना–

पं0 अम्बिकादत्त ने मधुवनी, बिहार प्रांत में अध्यापन कार्य के साथ ही 'धर्मसभा' और 'सुनीतिसंचारिणी' संस्थाओं की स्थापना की। इन्होंने पटना में 'बिहारसंस्कृतसंजीवन' को पुनर्जीवित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। व्यास जी न केवल साहित्य में अपना रचना कौशल दिखाते थे, अपितु न्यायदर्शन, वेदान्तदर्शन और व्याकरणशास्त्र में भी अधिकार रखते थे। पाणिनि की सूत्रपद्धति पर इन्होंने 'आर्यभाषासूत्रधार' नामक हिन्दी व्याकरण पर लेखन प्रारम्भ किया था; जो दुर्भाग्यवश पूर्ण नहीं हो सका।

8.5 अम्बिकादत्त व्यास जी का कृतित्व–

अद्वितीय प्रतिभाशाली व्यास जी ने 80 के लगभग रचनाएं की। जिनमें 'शिवराजविजय' का प्रमुख स्थान है। यह एक ऐतिहासिक उपन्यास है। इनकी अन्य मुख्य रचनाओं में 'सामवतम्' नामक नाटक ग्रन्थ है। इनके अतिरिक्त

गुप्ताशुद्धि प्रदर्शन, अबोधनिवारण एवं बिहारीविहार इनकी अन्य प्रमुख प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

जैसा कि पहले भी देखा गया है कि अधिक प्रतिभासम्पन्न व्यक्तियों की जीवनावधि बड़ी छोटी होती है; उसी प्रकार पं. अम्बिकादत्त व्यास जी जैसा प्रतिभासम्पन्न कवि हमारे मध्य कम समय तक रहा। मात्र 42 वर्ष की अवस्था में उनका स्वर्गवास हो गया । उस समय व्यास जी गवर्मेन्ट संस्कृत कालेज, पटना में प्रोफेसर थे। व्यास जी का देहावसान 1900 ई. सन् में मार्गशीर्ष त्रयोदशी सोमवार को हुआ था।

8.6 व्यास जी की प्रमुखरचनाएँ –

पं. अम्बिकादत्त व्यास जी ने संस्कृत भाषा में 27 ग्रंथों की रचना की। जो निम्नलिखित है–

(1) पातञ्जलप्रतिबिम्बम् (2) गणेशशतकम् (3) संस्कृताभ्यासपुस्तकम् (4) कथाकुसुमम् (5) सांख्यसागरसुधा (6) प्राकृत– प्रवेशिका (7) प्राकृतगूढकोश (8) सामवतनाटकम् (12) शिवराजविजयः (13) गद्यकाव्यमीमांसा (14) दुःखद्रुमकुठारः (15) बालव्याकरणम् (16) द्रव्यस्तोत्रम् (17) गुणशुद्धिप्रदर्शनम् (18) समस्यापूर्तिसर्वस्वम् (19) सहस्रनामरामायणम् (20) कुण्डलीदर्पणम् (21 आर्यभाषासूत्रधारः (22) इतिहाससंक्षेपः (23) रत्नाष्टकम् (24) पुष्योपहारः (25) मित्रालापः (26) अवतारमीमांसाकारिका (27) धर्माधर्म–कलकलम्।

पं. अम्बिकादत्त साहित्य के कुशल चित्रणकर्ता होने के साथ ही संस्कृत साहित्य की विविध विधाओं में रचना करने वाले एक ऐसे रचनाकार थे; जो देश और काल के अनुरूप साहित्य की रचना में समर्थ थे। इन्होंने व्याकरण, कथासाहित्य स्तुतिसाहित्य की रचना तो की ही; इसके साथ ही ये प्राकृतभाषा के मर्मज्ञ भी थे। इसका प्रमाण इनकी प्राकृतप्रवेशिका और प्राकृतगूढकोश है। इन्होंने 'रेखागणितम्' की रचना करके गणित के क्षेत्र में अपनी

प्रतिभा दिखाई, तो 'गद्यकाव्यमीमांसा' की रचना द्वारा अपने आलोचक की छवि को परिपुष्ट किया। इन्होंने बच्चों के प्रारम्भिक ज्ञान के लिये सरल भाषा में 'बालव्याकरणम्' लिखा एवं 'समस्यापूर्ति' लिखकर बालकों की रचना प्रतिभा को उद्वेलित किया। इसके अतिरिक्त इन्होंने 'कुण्डलीदर्पणम्' लिखकर अपने ज्योतिषज्ञान की आभा विकीर्ण की। इनका 'आर्यभाषासूत्रधार' ग्रन्थ भी साहित्यजगत् में उल्लेखनीय है। इनका 'शिवराजविजयम्' नामक ऐतिहासिक गद्यकाव्य आधुनिक संस्कृत साहित्य का मुकुटमणि है।

पं. अम्बिकादत्त व्यास जी ने संस्कृत के साथ ही हिन्दी भाषा में भी लगभग 60 पुस्तकों का सृजन किया। संस्कृत की भाँति ही हिन्दी में भी इन्होंने नाटक, गद्यकाव्य, पद्यकाव्य, समस्यापूर्ति और आत्मकथापरक विविध रचनाएँ की; जो उनकी विलक्षण प्रतिभा के परिचायक हैं। इसी प्रतिभा के कारण वे 'भारतेन्दुसभा' के सम्माननीय सदस्यों में रहे। इसी प्रकार बिहार राज्य में 'संस्कृतसञ्जीवनी' समाज की स्थापना करके संस्कृत के प्रचार प्रसार में अप्रतिम योगदान दिया। मात्र 42 वर्ष की अवस्था में इतने बडे साहित्यलोक का सृजन किसी दैवी चमत्कार से कम नहीं है। यदि इन्हें साहित्य के शङ्कराचार्य की पदवीं दी जाय; तो इनकी प्रतिभा का संभवतः उचित सम्मान हो सकता है।

शिवराजविजय– पं. अम्बिकादत्तव्यास जी ने इस ग्रंथ की रचना 1898 ई. में पूर्ण की थी। संस्कृत साहित्य की गद्यशैली में उपनिबद्ध यह ग्रंथ ऐतिहासिक उपन्यास की कोटि में आता है। यह ग्रंथ लगभग पाँच वर्षों में पूर्ण, हुआ था।

8.7.1 शिल्पविधान–

इस ग्रन्थ में पं. अम्बिकादत्त व्यास जी ने अपनी प्रतिभा और कल्पनाशक्ति का प्रयोग करके इसे उच्च कोटि का ग्रन्थ बनाने का सफल प्रयास किया है। इसके कथाशिल्प की संघटना में व्यास जी ने प्राच्य और पाश्चात्य शिल्प का

समन्वय किया है। इसमें मुख्यकथा के साथ एक अवान्तरकथा भी कथानक में चलती है। जिसमें एक कथा का नायक महाराष्ट्र गौरव वीर शिवाजी है; तो दूसरी कथा का नायक रघुवीर सिंह नाम का अंतेवासी है। तथापि ये दोनों कथाएँ एक दूसरे से असम्बद्ध नहीं हैं। ये अन्योन्याश्रित कथाएँ हैं और एक दूसरे की पूरक हैं। 'शिवराजविजय' का कथानक तीन विरामों में विभक्त है। प्रत्येक विराम में चार निःश्वास है। इसकी रचना मुख्यरूप से पाञ्चालीरीति में हुई है। इस रचना में व्यास जी ने अवसर के अनुकूल दीर्घसमास बहुलाशैली और सरललघुपदावली का प्रयोग किया है। समासरहित गद्य का एक उदाहरण दर्शनीय है– 'बटुरसौ आकृत्या सुन्दरः वर्णेन गौरः, जटाभिर्ब्रह्मचारी, वयसा षोडषवर्षदेशीया, कम्बुकण्ठः, आयतललाटः, सुबाहुर्विशाललोचनश्चासीति।'

8.7.2 भाषाशैली–

पं. अम्बिकादत्त व्यास जी का भाषा पर पूर्ण अधिकार था। वे साहित्य के माध्यम से भावाभिव्यक्ति ये समर्थ थे। यद्यपि व्यास जी की कृतियों पर महाकवि बाणभट्ट का प्रभाव था तथापि उन्होंने अपने काव्यग्रन्थ को अलङ्कारों के बोझ से बोझिल नहीं होने दिया।

8.7.3 अलङ्कारयोजना–

पं. अम्बिकादत्त व्यास जी ने अवसर के अनुकूल औचित्यपूर्ण अलङ्कारों का प्रयोग किया है। इन्होंनें शिवराजविजय' में प्रायः अनुप्रास, उपमा, श्लेष, दीपक आदि अलङ्कारों की सुन्दर योजना की है। विरोधाभास अलङ्कार के प्रयोग में ये बाणभट्ट का अनुगमन करते हुए दिखायी देते हैं। शिवाजी के वर्णन में विरोधाभास की छटा दर्शनीय है–

''स्थूलदर्शनामपि सूक्ष्मदर्शनाम्, ध्वंसकाण्डव्यसनिनीमपि धर्मधौरेयीम्, कठिनापि कोमलाम् उग्रापि शान्ताम्, शोभितविग्रहामपि दृढसन्धिबन्धाम्, कलितगौरवामपि कलितलाघवाम्।''

8.7.4 रसपरिपाक–

शिवराजविजय में यद्यपि शान्त आदि रसों का का भी प्रयोग हुआ है, तथापि इस गद्यकाव्य का मुख्य रस वीर है। यहाँ अन्य रसों का प्रयोग उसके उपकारक के रूप में हुआ है। इस ग्रन्थ में अफजलखान को उत्तर देते हुए गौरसिंह के द्वारा शिवाजी के शौर्य का अद्‌भुत चित्रण है। व्यास जी ने जहाँ श्रृङ्गारिक वर्णन किया है वहाँ भी मर्यादा और शिष्टाचार में आबद्ध होते वर्णन सात्विक हो गया है।

8.7.5 संवाद योजना –

पं. अम्बिकादत्त व्यास जी ने इस गद्यकाव्य में सर्वोत्तम संवादयोजना की है। वस्तुतः सजीव रोचक और सरलभाषा में संवादयोजना औपन्यासिक गद्यकाव्य का प्राणभूत तत्त्व है। व्यासजी की ये विशेषताएं ही इस गद्यकाव्य की हृदयग्राहिता का रहस्य है। इसके संवाद बडे ही रोचक हैं। इसके संवादों में कहीं भी अनावश्यक विस्तार नहीं प्राप्त होता। संवादों की भाषा स्पष्ट और मुहावरेदार है; जो वर्ण्यविषय को रोचकता प्रदान करती है। संवादो की इस रोचकता का एक उदाहरण द्रष्टव्य है– दौवारिकः– आम् अये कथ्यताम् । संन्यासी– वयं च संन्यासिनो वनेषु गिरिकन्दरासु च विचरामः। दौवारिकः– स्यादेवम् । अग्रे– अग्रे। ''इत्यादि।

8.8 भाषा शैली–

पं. अम्बिकादत्त व्यास जी की वर्णना शैली सरल स्वाभाविक एवं प्रवाहपूर्ण है। इस 'गद्यकाव्य में राजनैतिक दाँव पेंचो और रणकौशल का सुन्दर चित्रण है। ग्रन्थकार ने मानवाकृति और हाव–भावों का भी सुन्दर चित्रण किया है ''कहीं – हास्य–व्यङ्ग का चित्रण है; तो कहीं अन्तः एवं बाह्य प्रकृति का सूक्ष्म चित्रण किया है। इनकी वर्णन शैली में दण्डी और बाणभट्ट दोनों की शैली के गुण दृष्टिगत होते हैं। शिवराजविजय की भाषा प्रचलित एवं मुहावरेदार

है। कथाप्रवाह अबाधित गति वाला है। अपने भावों को सुन्दर एवं स्पष्ट ढंग से कहने में व्यासजी अद्वितीय हैं।

आशय यह है कि पं. अम्बिकादत्त व्यास की भाषा प्राञ्जल है इनकी शैली पूर्ववर्ती सुबन्धु, बाण और दण्डी की कृतियों और शैलियों से प्रभावित होते हुए भी अपनी मौलिकता से पाठक को प्रभावित करती है।

8.9 चरित्रचित्रण –

पं. अम्बिकादत्त व्यास जी नें इस ग्रन्थ में मुगलकालीन सामाजिक परिस्थितियों पर प्रकाश डाला है। इन्होंने मुगलकाल में व्याप्त यवनों के अत्याचार, हिन्दुओं की दयनीय दशा एवं मुगलों की दमनकारी प्रवृत्तियों का यथार्थ चित्रण किया है। प्रथम निश्वास में इस स्थिति का सुन्दर चित्रण है– '' अद्य हि वेदाः विच्छिन्न वीथीषु विक्षिप्यन्ते, धर्मशास्त्राणि उद्धूय धूमध्वजेषु ध्मायन्ते, पुराणानि पिष्ट्वा पानीयेषु पात्यन्ते, भाष्याणि भ्रंशयित्वा भ्राष्ट्रेषु भर्ज्यन्ते।' ' इन पंक्तियों में व्यासजी ने एक यवनयुवक द्वारा गरीब ब्राह्मण की कन्या का अपहरण और यवनों के अत्याचार का सजीव चित्रण किया है, जिससे तत्कालीन प्रजा की सामाजिक स्थिति का परिचय मिलता है।

8.10 प्रकृति चित्रण–

'शिवराजविजय' में पं. अम्बिकादत्तव्यास जी नें जो प्रकृति चित्रण किया है; उसमें पर्याप्त प्रौढता एवं सजीवता दृष्टिगोचर होती है। वस्तुतः कवि की काव्यगत सफलता का मापदण्ड प्रकृतिचित्रण को माना गया है। अतएव व्यास जी नें सूर्योदय, सूर्यास्त, चन्द्रोदय' चन्द्रास्त एवं रात्रि आदि प्राकृतिक दृश्यों का मनोहारी वर्णन कर अपनी काव्यकुशलता का परिचय दिया है। वस्तुतः व्यास जी प्रकृति के मनोरम रूप के चित्रण में जितने प्रवीण हैं, भीषण रूप के चित्रण भी उतने ही निपुण है।

''कदलीदलकुञ्जायितस्य एतत्कुटीरस्य समन्तात् पुष्पवाटिका, पूर्वतः

परमपवित्रपानीयं, परस्सहस्रपुण्डरीकपटलपरिलसितं पतङ्गकुलकूजितपूजितं पयः सर आसीत्। दक्षिणतश्चैको ''निर्झरझर्झरझटितिदिगन्तरः..... सुन्दरकन्दरः पर्वतखण्ड आसीत्। इस चित्रण से हमारे सम्मुख पर्णकुटी और पर्वतखण्ड का सजीव चित्र उपस्थित हो जाता है।

8.11 पात्रयोजना–

शिवराजविजय में वर्णित सभी पात्र प्रायः प्रतिनिधिपात्र के रूप में चित्रित किये गये हैं। इस में वर्णित शिवाजी नामक पात्र और उनके सहयोगी देश, जाति एवं धर्म से अटूट प्रेम करते है। वे सभी राष्ट्रभक्ति की भावना से ओत प्रोत हैं।

8.12 पात्रचित्रण –

इस गद्यकाव्य के पात्रों के चरित्र चित्रण में पं. अम्बिकादत्त व्यास जी ने स्वाभाविकता पर बल दिया है। उनका प्रत्येक पात्र जीवन्त और प्रभावी है। वह चाहे योगिराज नाम का पात्र हो अथवा ब्रह्मचारी गुरु या ब्रह्मचारी हो या आश्रमवासी ब्रह्मचारी हो। वस्तुतः शिवाजी की ऐतिहासिक कथावस्तु पर आधारित इस गद्यकाव्य में रचनाकार की दृष्टि वस्तुवादी होने के साथ ही साहित्यिक भी है। व्यास जी ने अपनी लेखनी के सामर्थ्य से ऐसे सशक्त चरित्र उकेरे हैं; मानों पाठक उसे देख रहा है।

(1) औरङ्गजेब का परिचय यवनों के सरदार के रूप में हुआ है। उसका शब्दचित्र उकेरते हुए व्यास जी कहते हैं–

''मूर्तिमदेव कलियुगगृहीतविग्रह इव चाधर्मः, आलमगीरोपाधिधारी' औरङ्गजेबः सम्प्रति दिल्लीबल्लभतां कलङ्कयति।'' (शि.पू.नि.) इस गद्यकाव्य में औरङ्गजेब अधर्म और पाप के प्रतीक कलियुग की साक्षात् मूर्ति के रूप में वर्णित है। वह परायी स्त्रियों का अपहरण करता है, बाजार में ऐसी अबलाओं के शील और सम्मान का व्यापार करता है। वह कुलीन नारियों के सतीत्व का

अपहर्ता है। दीनदुखियों का शोषण, अपहरण और विनाश में रुचि रखने वाला तथा हिन्दूजाति का प्रबल शत्रु है। वह क्रूर यवन शासक के रूप में चित्रित हुआ है।

2. शिवाजी– इस गद्यकाव्य में वर्णित शिवाजी भारतीय संस्कृति और आदर्शों के प्रतिनिधिपात्र हैं। ये अप्रतिमवीर हैं। इनका नाम सुनकर शत्रुओं शरीर में भय व्याप्त हो जाता है। शिवाजी अत्यन्त वीर है। सनातन धर्म की रक्षा के लिये ये अपने प्राणों की परवाह नहीं करते। ये हिन्दुओं के एक सूत्र में आबद्ध न होने दुखी रहते थे। शिवाजी साम्राज्य के लोभी नहीं; अपितु हिन्दू राजाओं को एकता के सूत्र में आबद्ध करके मुगलों को भगाने की आकाङ्क्षा रखते थे। ये किसी भी स्थिति में मुगलों से सन्धि नही करना चाहते थे।

शिवाजी राजनीति में दक्ष थे। ये दुष्टों के साथ दुष्टता का व्यवहार करने में रञ्चमात्र भी सङ्कोच नहीं करते थे। उनके शासन में प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को राष्ट्र के प्रति समर्पित मानता था।

शिवाजी के शासनकाल में मुनियों के आश्रमों में बालकों को ज्ञान विज्ञान की शिक्षा के साथ ही अस्त्रशस्त्र का शिक्षा एवं राजनैतिक शिक्षा भी दी जाती थी। आश्रमों की पर्णकुटीरों के छप्परों में छिपाकर अस्त्र–शस्त्र रखे जाते थे। इनका उपयोग सङ्कटकाल में किया जाता था।

शिवाजी के कर्मचारी बडे निष्ठावान् थे। वे शिवाजी को ईश्वर (शिव) का अवतार मानते थे। इसी के अनुपालन में गौरसिंह (वटु) संन्यासी वेश में जाकर किले के द्वारपाल की परीक्षा लेता है। रघुवीरसिंह आँधी तूफान की परवाह न करते हुए आवश्यक सूचना लेकर तोरणदुर्ग पहुँचता है। इसका आशय यह है कि शिवाजी एक कुशल राजनीतिज्ञ थे। अतएव शत्रु की सेना शिवाजी की वीरता एवं शिवसैनिकों की निर्भीकता एवं रणकौशल से सदैव भयाक्रान्त रहती थी। कुछ पंक्तियों से इसकी झलक देखी जा सकती है।

3 रघुवीर सिंह– शिवराजविजय में इस पात्र का चित्रण शिवाजी के विश्वस्त गुप्तचर के रूप में हुआ है। रघुवीरसिंह के चातुर्यपूर्ण कौशल से तोरणदुर्ग का अध्यक्ष आश्चर्यचकित हो जाता है। शिवाजी के आदेश का पालन करने के लिये वह विविध मार्ग कष्टों को सहते हुए दुर्ग के द्वार बंद होने से पूर्व ही वहाँ पहुँच जाता है। जब दुर्गाध्यक्ष उससे पूछते हैं कि इतने कम समय में कैसे यहाँ तक पहुँचे तो वह कहता है कि– 'स्वामी का ऐसा ही आदेश था।' आशय यह है कि रघुवीर सिंह यद्यपि शिवाजी का सेवक था, तथापि वह प्राणों की परवाह न करते हुए आदेशपालन में तत्पर था। सौवर्णी का संगीत सुनकर वह थोड़ा उद्वेलित होता है, किन्तु शीघ्र ही मन पर अधिकार कर लेता हैं। जब मन्दिर का पुजारी सौवर्णी की दी हुई माला और प्रसाद उसे भेंट करता है तब उसके प्रति उसका आकर्षण पुनः बढ़ता है; किन्तु शिष्टाचार वश वह वह माला पुनः सौवर्णी को भेट कर देता है।

4 गौरसिंह व श्यामसिंह – पं. अम्बिकादत्त व्यास ने शिवराजविजयम् में इनका वर्णन दो क्षत्रिय युवको के रूप में हुआ है। ये दोनों अपनी मातृभूमि से चलकर कोंकण प्रदेश पहुँचते हैं और अपनी युद्धकला से शिवाजी को चमत्कृत करते हैं। इनमें से गौरसिंह कन्या का अपहरण करने वाले युवक की हत्या कर देता है। और इसकी तलाशी लेता है और उसकी जेब से एक पत्र निकालता है जिससे अफजलखान की आगामी योजना का खुलासा होता है। गौरसिंह वेश बदलकर कभी गायक बनता है, तो कभी संन्यासी और कभी सैनिक बन जाता है। कभी वह गुप्तचर का वेश धारण करता है। वह अत्यन्त निर्भीक होकर शत्रु के शिविर में अकेले ही प्रवेश कर जाता है। वहाँ का भेद ज्ञात करता है। वह शत्रु के शिविर में भी अपने स्वामी के पराक्रम का गान करता है. जिससे अफजलखान स्तब्ध रह जाता है।

वह संन्यासी बनकर दुर्ग के द्वारपाल की परीक्षा लेता है। यही नहीं वह महाव्रतियों के आश्रम की व्यवस्था करके पुण्य अर्जित करता है। अपने स्वामी

शिवाजी का अनुकरण उसकी छाया की भाँति करता है। सौवर्णी और देव शर्मा नामक पुरोहित को देखकर जो बाते कहता हैः वह मनमानस को उद्वेलित कर देता है।

इसी प्रकार श्यामसिंह नामक पात्र भी छाया की तरह उसका अनुगमन करता है और हर क्रियाकलाप में बढ़ चढ़कर हिस्सा लेता है।

5. अफजलखान– इस गद्यकाव्य का प्रतिनायक अफजलखान है । जिसे शाहजहाँ ने शिवाजी पर विजय प्राप्त करने के लिये भेजा है। यद्यपि वह शिवाजी को जीवित अवस्था में पकड़ने की प्रतिज्ञा (प्रण) ले चुका है; तथापि वह अत्यन्त विलासी और लम्पट है। इसी विलासिता के कारण वह मारा जाता है। वह यवन संस्कृति को आगे बढ़ाता है। पं. अम्बिकादत्त व्यास जी ने उसे विलासी, अदूरदर्शी, आत्मप्रशंसक और राजनीति में अकुशल दर्शाया है। तानरंग बने गौरसिंह को वह अपनी योजना बता देता है, फलतः वह छल से मारा जाता है। उसके लम्पट चरित्र की झाँकी इन पंक्तियों में दर्शनीय है।

''अद्यनृत्यम्, अद्य गानम् अद्य लास्यम्, अद्य मद्यम्, अद्य वाराङ्गनां भ्रूकुंसकः अद्य वीणावादनम्, इति स्वच्छन्दैरुच्छृखलाचरणैः दिनानि गमयति।''

संक्षेपतः यह कहा जा सकता है कि पं. अम्बिकादत्त व्यास जी नें अपने गद्यकाव्य 'शिवराज विजयम्' के पात्रों का जैसा सजीव और हृदयग्राही चित्रण किया है; वह उन्हें कुशल साहित्य शिल्पी के रूप में स्थापित करती है।

8.15 शिवराजविजयः का कथासार–

इस ऐतिहासिक गद्यकाव्य की कथावस्तु तीन विरामों में विभक्त है। प्रथम विराम में चार निःश्वास है। जिनमें प्रथम विराम के प्रथम निःश्वास का प्रारम्भ श्रीमद्भागवत से उद्धृत दो श्लोको के मङ्गलाचरण से होता है। इस मङ्गलाचरण द्वारा भावी कथावस्तु की सूचना मिलती है; जिसमें भगवान् विष्णु की भगवतीमाया का वर्णन करते हुए कवि ने भविष्य में होने वाले शत्रुबध की

सूचना दी है। इसके साथ ही यवन युवक द्वारा अपहृत ब्राह्मणकन्या के विषय में बताकर तत्कालीन सामाजिक स्थिति की सूचना भी दी है।

कथानक प्रथम दृश्य में प्रातः काल सोकर उठे गौरसिंह के द्वारा भगवान सूर्य का वर्णन करते हुए गुरुसेवा हेतु पुष्पचयन का चित्रण है। इसके पश्चात् दूसरे दृश्य में उसके सहाध्यायी श्यामसिंह द्वारा उसे पुष्पचयन से रोका जाता है; क्योंकि उसने गौरसिंह के जागने से पहले ही उठकर पुष्पावचय कर लिया था।

इस प्रथम निःश्वास की कथा में ही उस आश्रम के एक कोने में स्थित पर्वतशिखर से उतरते हुए योगिराज का वर्णन है; जो सम्भवतः उस पर्वत की उपत्यका में दीर्घकाल से समाधि लगाये बैठे थे। इन अज्ञात योगिराज ने 'कब समाधि ली थी'; 'ये कौन थे'– इस विषय में सबमें कूतूहल था। बीच–बीच में आस–पास के निवासी जाकर उनका दर्शन पूजन कर आते थे। समाधि से उठने पर वे पर्वत से नीचे की ओर उतर कर आते हैं और इन ब्रह्मचारियों के गुरु के आश्रम में जाकर तत्कालीन समाज की दशा के विषय में पूछते हैं। इसी मध्य एक बालिका का करुण क्रन्द्रन सुनकर वे उसके वृत्तान्त को जानने की इच्छा प्रकट करते हैं। तब ब्रह्मचारियों के गुरु उस के आश्रम तक आने के वृत्तान्त को उन्हें सुनाते हैः जिससे वे क्षुब्ध हो उठते हैं।

ये अज्ञात योगिराज वस्तुतः विक्रमादित्य के शासनकाल में समाधिस्थ हुए थे। अब शिवाजी के शासनकाल में समाधि से उठे थे। ये उस समय व्याप्त यवनों के दुराचार और धर्मविध्वंसक वृत्तान्त को सुनकर बहुत दुखी होते है। ब्रह्मचारिगुरु के पूछने पर महाराज शिवाजी के विजयी होने की भविष्यवाणी करके पुनः योगसमाधि लगाने अपनी कन्दरा में चले जाते हैं।

योगिराज को देखने के लिए आये हुए अपरिचित व्यक्तियों के चले जाने पर मुनि जैसे ही गौरवटु को बुलाकर अफजलखान के विषय में कुछ पूछना चाहते हैं; वैसे ही आश्रम के एक कोने से किसी के पैरों की आहट सुनायी देती

है। इसके पश्चात् एक ऊँचे शिलाखण्ड पर चढकर देखने पर आश्रम की गृहवाटिका के झुरमुट में केले के दो तीन वृक्ष हिलते दिखायी देते हैं। तब ब्रह्मचारिगुरु संशयापन्न स्थल पर गौरवटु के साथ हथियार लेकर जाते हैं; वहाँ गौरसिंह का वहाँ छुपे यवनयुवक से पहले ओजस्वी वाद–विवाद होता है। तत्पश्चात् दोनों में खड्गयुद्ध होता हैं; जिसमें यवनयुवक मारा जाता है। उसके मरने के बाद गुरु का सङ्केत पाकर एक सेवक उस यवनयुवक के कपड़ो की तलाशी लेता है। जिसे लेकर ये दोनों आश्रम की कुटी में प्रवेश करते हैं। ब्रह्मचारिगुरु गौरवटु को शाबाशी देते हैं। प्रथम निःश्वास की कथा यहीं समाप्त हो जाती है।

बोधप्रश्न

1. गद्यसाहित्य का आधुनिक काल कब से प्रारम्भ होता है?
2. पं. अम्बिकादत्त व्यास के पिता का क्या नाम था?
3. घटिकाशतक की उपाधि किसे प्राप्त हुई थी ?
4. पं. अम्बिकादत्त व्यास जी का जन्म कब हुआ था ?
5. पं. अम्बिकादत्त व्यास की कर्मभूमि कौन सी थी ?
6. पं. अम्बिकादत्त व्यास जी का जन्म कहाँ हुआ था?
7. व्यास जी के पूर्वज कहाँ के निवासी थे ?
8. व्यास जी का स्वर्गवास किस सन् में हुआ था?
9. व्यास जी की अन्य प्रमुख रचनायें कौन सी हैं ?
10. व्यास जी ने शिवराज विजय में शिवाजी के शासनकाल के कितने वर्षों की घटनाओं को चित्रित किया था ?

ईकाई–9

संस्कृत गद्यांश का हिन्दी में अनुवाद एवं संस्कृत व्याख्या

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 संस्कृत गद्यांश का हिन्दी में अनुवाद एवं संस्कृत व्याख्या (विष्णोर्माया– भगवती0 से आर्यवंश्याश्चाभिमन्यामहे) तक।

9.4 बोध प्रश्न

9.1. प्रस्तावना–

आधुनिक संस्कृत गद्य 'साहित्य का सामान्य परिचय एवं गद्यकार पं. अम्बिकादत्त व्यास के व्यक्तित्व और कृतित्व के परिचय के उपरान्त प्रथम निःश्वास के प्रारंभिक अंशों का हिन्दी अनुवाद एवं संस्कृत व्याख्या का अध्ययन प्रस्तावित है। विद्यार्थियों के संस्कृत ज्ञान के लिये इसका ज्ञान अनिवार्य है।

9.2 उद्देश्य –

1. छात्र संस्कृत से हिन्दी अनुवाद सीख सकेंगे।

2. संस्कृत शब्दों के ज्ञानकोश में वृद्धि होगी।

3. संस्कृत गद्यांशों की साहित्यिक परम्परा के अनुसार संस्कृत में व्याख्या का ज्ञान होगा।

9.3 'शिवराजविजय के प्रारम्भिक गद्यांशों का हिन्दी में अनुवाद एवं संस्कृत में व्याख्या (विष्णोर्भगवती. से आर्यवंश्याभिमन्यामहे' पर्यन्त)

शिवराजविजयः (प्रथमो निःश्वास)

(शिवराजविजय, प्रथम निःश्वास)

''विष्णोर्माया भगवती यया सम्मोहितम् जगत्। ''

(भागवतम् – 10./1 /25

''हिंस्रः स्वपापेन विहिंसितः खलः साधुः समत्वेन भयाद्विमुच्यते।''

भागवतम् – 10/6. 31

संस्कृत व्याख्या – सरस्वत्याः वरद पुत्रः कविवरःअम्बिकादत्त व्यासमहोदयः वीररसान्वित गद्यकाव्यं कर्तुम् इच्छन् शिष्टाचारपरम्परायाः निर्वाहार्थम् प्रारिप्सित विघ्नापहारफलदं इदानीं वेदव्यासेन श्रीमद्भागवते उक्तम् 'विष्णोर्माया' इति वचनम् उपस्थापयति। निखिलं जगत् यथा सत्वप्रधानया मायाशक्त्या मोहाविष्टं वर्तते सा भगवतः विष्णोः माया षड्विधैश्वर्यसम्पन्ना इत्युक्तम् अनेन श्लोकार्धेन। विष्णोः– जगत् व्यापी श्रीनारायणस्य माया इति शब्देन ख्याता सत्वप्रधाना शक्तिः भगवती – ऐश्वर्यशालिनी अशेषगुणसमन्विता 'वर्तते' इति शेषः। यथा जगत्– भुवनम् सम्मोहितम सम्यक्तया मोहितम् अर्थात् चारुतया मोहेन वशीकृतम्। अतः सुष्ठूक्तम – ऐश्वर्स्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः। ज्ञानवैराग्योश्चैव षण्णाभग इतीरिणा।। (श्रीमद्भा. 10 /1/25)

संस्कृत व्याख्या – हिंस्रः हिंस्राचरणयुक्तः खलः– दुर्जनः स्वपापेन–स्वेनपातकेन बिहिंसितः– विशेषेण घातितः, साधुः साधुजनाः समत्वेन रागद्वेषादिरहितत्वेन समत्वभावनया भयाद्–भीतेः विमुच्यते– विशेषेण मुच्यते अर्थात् मुक्तिः अधिगम्यते।

अत्र सज्जनः स्वकीयेन सत्कर्मणा अपगतभयो भवतीति आशयः। एवं हिंसकजनः स्वकीयेन पापकर्मणा विनश्यति सज्जनश्च स्वसमत्वबुद्ध्या निर्भयो भवति इति आशयो अत्र अस्ति।। अत्र समग्रश्लोकमिदमस्ति –

अहो बताद्भुतमेष रक्षसा बालो निवृत्तिं गमितोऽभ्यगात् पुंसः।

हिंस्रः स्वपापेन विहिसितः खलः साधुः समत्वेन भयाद् विमुच्यते।।

(भागवतम् 10/6/31)

अन्वयः– विष्णोः माया भगवती यया जगत् सम्मोहितम्।

हिन्दी अनुवाद – (भगवान्) विष्णु की (सत्वप्रधान) मायाशक्ति ऐश्वर्यशालिनी है; जिससे (अखिल) विश्व सम्यग्रूप से मोहित किया गया है।

शिवराजविजयः – हिंस्रः स्वपापेन विहिंसितः खलः साधुः समत्वेन भयाद्विमुच्यते।

अन्वय– हिंस्रः खलः स्ववापेन विहिंसितः साधुः समत्वेन भयाद् विमुच्यते।

हिन्दी अनुवाद– दुष्ट हिंसक अपने पाप के कारण मारा गया (और) साधुजन अपने समत्व (बुद्धि) के कारण भय से मुक्त हो गये।

विशेष– पूर्वोक्त पंक्तियाँ श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध के प्रथम अध्याय के पचीसवें श्लोक का अर्धांश हैं। एवं द्वितीय श्लोकार्ध भी श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध के छठें अध्याय के इकतीसवें श्लोक से उद्धृत है। इन पङ्क्तियों को पं. अम्बिकादत्त व्यास ने मङ्लाचरण के रूप में ग्रंथ के प्रारम्भ में उद्धृत किया है। वस्तुतः इसे वस्तुनिर्देशात्मक मङ्गलाचरण माना जा सकता है। श्लोक की प्रथम पङ्क्ति (विष्णोर्माया0) भगवान् विष्णु की माया की ऐश्वर्यशालिता एवं सर्वव्यापकता की सूचक है। ग्रंथ के प्रारम्भ में 'विष्णु' शब्द का प्रयोग मङ्गल का वाचक भी है।

मङ्गलाचरण में प्रयुक्त द्वितीय सूक्ति (श्लोकार्ध) (''हिंस्रः स्वपापेन'') बालश्रीकृष्ण द्वारा चक्रवात का रूपधारण करके आये हुए तृणावर्त नामक असुर के विनाश के पश्चात् नन्दराज एवं गोपसमूह के मुखारविन्द से उच्चरित हुआ है। यह श्लोकार्ध भविष्य में होने वाली शिवाजी जी की विजय और मुगलशासक के विनाश को सूचित करता है। अतः इसे वस्तुनिर्देशात्मक नांदी कहा जा सकता है। नान्दी का लक्षण है – ''आशीर्नमस्क्रिया वस्तुनिर्देशोवापि तन्मुखम्।'

शिवराजविजयः– अरुण एष प्रकाशः पूर्वस्यां भगवतो मरीचिमालिनः। एषः भगवान् मणिराकाशमण्डलस्य, चक्रवर्ती खेचरचक्रस्य, कुण्डलमाखण्डलदिशः दीपको ब्रह्माण्डभाण्डस्य, प्रेयान् पुण्डरीकपटलस्य, शोकविमोकः कोकलोकस्य,अवलम्बो रोलम्बकदम्बस्य, सूत्रधारः सर्वव्यवहारस्य, इनश्च दिनस्य। अयमेव अहोरात्रं जनयति, अयमेव वत्सरं द्वादशषु भागेषु विभनक्ति, अयमेव कारणं षण्णामृतूनाम्, एष एवाङ्गीकरोति उत्तरं दक्षिणं चायनम्, एतेनैव सम्पादिता युगभेदाः, एतेनैव कृताः कल्पभेदः, एनमेवाश्रित्य भवति परमेष्ठिनः परार्द्धसंख्या, असावेव चकर्ति, बिभर्ति, जहर्ति च जगत्, वेदा एतस्यैव वन्दिनः, गायत्री अमुमेव गायति, ब्रह्मनिष्ठाः ब्राह्मणाः अमुमेवाहरहः उपतिष्ठन्ते। धन्य एव कुलमूलं श्रीरामचन्द्रस्य, प्रणम्य एषः गुरुसेवनपटुर्विप्रवटुः।

व्याख्या– अस्मिन् गद्यखण्डे पं. अम्बिकादत्तव्यासमहोदयेन सूर्यस्य महिमानं वर्णयन्तं 'शिवराजविजय' इत्याख्य गद्यकाव्यस्य प्रारब्धवान् पूर्वस्यां–प्राच्यां दिशि, भगवतः– भगवान् ऐश्वर्यशाली वातस्य नः, मरीचिमालिनः– मरीचिर्माली मरीचीनां अस्यास्तीति सूर्यस्य, एषः– अयम्, अरुणः– लोहितः रक्तवर्णीय प्रातःकालीनः प्रकाश अस्ति, ईषद्रक्त इत्यर्थः, एषः–अयम् रक्तिमः – रक्त प्रकाशः– खद्योतः विद्यते इति शेषः। एषः– पुरोदृश्यमान भगवान् आदित्यस्य, आकाशमण्डलस्य– नभोमण्डलस्य, मणिः– रत्नस्वरूपम्। खेचरचक्रस्य– खे नभसि चरन्तीति खेचराः– तारागणाः तेषां मण्डलस्य समुदायस्य,चक्रवर्ती–सार्वभौमो नृपः अस्ति इति शेषः, आखण्डलदिशः– आखण्डलस्य इन्द्रः तस्य दिक् आखण्डलदिक् तस्य, प्राच्या दिशारूपी वनितायाः, कुण्डलम् – कर्णाभरणम् इव, ब्रह्माण्डभाण्डस्य – ब्रह्माण्डमेव भाण्डम तस्य ब्रह्माण्डभाण्डं–गृहं तस्य ब्रह्माण्डस्य गृहस्य दीपकः– प्रकाशकः, पुण्डरीकपटलस्य– पुण्डरीकाणां पटलं समूहः तस्य सिताम्भोजसमूहस्य प्रेयान् – अत्यन्तप्रियः अस्ति, कोकलोकस्य– कोकानां चक्रवाकाणां लोकः समूहः तस्य चक्रवाकसमूहस्य, शोकविमोकः– शोकस्य वियोगजनितः संतापस्य, विमोकः मोक्षः कष्टहर इत्यर्थः, रोलम्बकदम्बस्य– रोलम्बानां– भ्रमराणां कदम्बस्य समूहः

तस्य द्विरेफसमूहस्य, अवलम्बः– आश्रयभूतः, सर्वव्यवहारस्य– सर्वेषां जनानां अशेषव्यवहारस्य सूत्रधारः प्रवर्तयिता, दिनस्य– दिवसस्य, इनः–स्वामी विद्यते इति शेषः।

अयमेव– भगवान् भास्करः एव अहोरात्रं– अहश्च रात्रिश्च अहोरात्रः– नक्तंदिवः तम् जनयति– उत्पादयति विदधाति वा, अयमेव एष आदित्य एव, वत्सरं–संवत्सरं, द्वादशसु– द्वादशसंख्याकेषु मेषवृषादिरूपेषु–भागेषु–खण्डेषु, विभनक्ति– विभजते। अयमेव अयम् सूर्यः एव षण्णामृतूनां वसन्तग्रीष्मवर्षाशरद्धेमन्तशिशिररूपाणां षण्णां षट्संख्यकानाम् ऋतूनाम् कारणं हेतुराधारो वा। एष–विवस्वान् एव, उत्तरदक्षिणं उदीचीमवाची च अयनं– स्वकीयं मार्गम् अङ्गीकरोति– स्वीकरोति, एतेनैव– सूर्येणैव सम्पादिताः एतेन युगभेदाः सत्ययुगत्रेताद्वापरकलि इत्याख्यः युगविभागाः। एतेनैव–एतेन सूर्येण एव कृताः–विहिताः कल्पभेदाः–कल्पस्य एकसहस्त्रमध्ययुगात्मकस्य भेदाः विभागः कृताः विहिताः व्यवस्थापिताः वा। एनं– विवस्वन्तमेव आश्रित्य– आश्रयं कृत्वा, परमेष्ठिनः– जगत्स्रष्टुः ब्रह्मणः, परार्द्धसंख्या– चरमापरार्द्ध नाम्ना प्रथिता संख्या भवति जायते पूर्णतामेति इत्यर्थः।

असौ–सविता, एव–निश्चयेन, जगत्– निखिलं भुवनं, चकर्ति–पुनःपुनः करोति, विभर्ति–पौनःपौन्येन भरति, जहर्ति पौनःपौन्येन हरति च। वेदाः ऋग्यजुःसामवेदाः इत्याख्यो वेदाः, एतस्य– भगवतो भास्करस्य एव, वन्दिनः– स्तुतिगायकाः। गायत्री इत्येतन्नामिका देवी, अमुम् – आदित्यमेव, गायतिगानं कुरुते, ब्रह्मनिष्ठा– ब्रह्मणि निष्ठा येषां ते वेदपारगाः, ब्राह्मणाः ब्रह्मणिरता– ब्रह्मणिरताश्च, ब्राह्मणाः– विप्रा, अमुम्–आदित्यम् एव, अहरहः– प्रतिदिनम्, उपतिष्ठन्ते– उपासते। श्रीरामचन्द्रस्य– दशरथसुतस्य, कुलमूलं– वंशाग्रजम्, एष– दिवाकरः, धन्यः– प्रशंसायोग्यः, एषः– अयं सूर्यः, विश्वेषां– सर्वेषां जनानां कृते, प्रणम्यः– वन्दनीयः इति– अस्माद् हेतोः– उदेष्यन्तम्– उदीयमानं, भास्वन्तम्– भास्करम् प्रणमन्– प्रणामं विदधन् निजपर्णकुटीरात् स्वरूपं पर्णोटजात्

कश्चित् अज्ञातनामा कोऽपि गुरुसेवनपटुः– गुरूणां सेवने– सेवायाम्, पटुः– निपुणः, विप्रस्य द्विजस्य वटुः बालकः, निश्चक्राम– निर्जगाम बहिरागच्छत् इत्यर्थः।

हिन्दी अनुवाद– पूर्व दिशा में भगवान् मरीचिमाली (सूर्य) का यह रक्तिम (लाल रंग का) प्रकाश है। ये (सूर्य) भगवान् आकाशमण्डल के मणि हैं, नक्षत्र (खेचर), समूह के चक्रवर्ती (राजा) हैं, इन्द्र की दिशा के कुण्डल हैं। ब्रह्माण्डरूपी गृह के दीपक (प्रकाशक) हैं, पुण्डरीक (कमल) समूह के अत्यन्त प्रिय हैं, चक्रवाकसमूह के शोक को दूर करने वाले (हैं) भ्रमरसमूह के आश्रयभूत (हैं) ,समस्त लोकव्यवहार के प्रवर्तक हैं, दिन के स्वामी (हैं) अर्थात् उत्पन्न करते हैं। यह (सूर्य) ही संवत्सर को बारह भागों (मासों) में विभक्त करते हैं, यही (वसन्तादि)) छहों ऋतुओं के कारण हैं, ये ही उत्तर और दक्षिण अयन रूप (सूर्य के) मार्ग का अवलम्बन करते हैं। इन (सूर्य) के द्वारा ही (सत्ययुगादि) युगभेदों को सम्पादित किया जाता है; इनका आश्रय लेकर ही परमेष्ठी (ब्रह्मा) की (अन्तिम) परार्द्धसंख्या पूर्ण होती है। ये (सूर्यभगवान्) ही (समग्र) जगत् की पुनः पुनः सृष्टि करते हैं, पालन करते हैं और संहार भी करते हैं। वेद इन (भगवान् सूर्य) की ही स्तुति करते हैं, गायत्री इन्ही (सूर्य की महिमा) का गान करती है, ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मण प्रतिदिन इन्हीं की उपासना करते हैं। श्रीरामचन्द्र के कुल के मूल ये (सूर्य) धन्य हैं; ये सबके प्रणाम के योग्य है; इस प्रकार उदित होते हुए सूर्य को प्रणाम करता हुआ कोई गुरु की सेवा में निपुण ब्राह्मणबालक अपनी पर्णकुटी से बाहर निकाला।

विशेष– समस्त कालचक्र के सूर्य से नियन्त्रित होने के कारण इन पंक्तियों में कवि ने सूर्य की महिमा और कार्य का वर्णन किया है।

शिवराजविजय– ''अहो चिररात्राय सुप्तोऽहम्। स्वप्नजालपरतंत्रेणैव महान् पुण्यमयसमयोऽतिवाहितः। संध्योपासनसमयोऽयमस्मद्गुरुचरणानाम्, तत्सपदि अवचिनोमि कुसुमानि'' इति चिन्तयन् कदलीदलमेकमाकुञ्च्य, तृणशकलैः सन्धाय,

पुटकं विधाय, पुष्पावचयं कर्तुमारेभे। बटुरसौ आकृत्या सुन्दरः, वर्णेन गौरः, जटाभिर्बह्मचारी, वयसा षोडशवर्षदेशीयः, कम्बुकण्ठः, आयतललाटः, सुबाहुर्विशाललोचनश्चासीत्।'

संस्कृत व्याख्या– गद्यखण्डेऽस्मिन् ब्राह्मणवटुः चिरकाल पर्यन्तम् शयनाद् हेतोः स्वचित्तस्य खेदं प्रकटीकरोति– अहो– अहो! आश्चर्यं विस्मयान्वित विषादम् खेदं वा अस्ति अहम् – विप्रवटुः चिररात्राय चिरकालं यावत् सुप्तः शयितः। ''चिराय चिरस्याद्याश्चिरार्थका'' इत्यमरः, ''स्यान्निद्रा शयनं स्वापः स्वप्न संवेश'' इत्यपि। स्वप्नजालपरतंत्रेण– स्वप्न एव जालं, तस्य परतंत्रेण– स्वप्नस्य निद्रायाः परतंत्रेण आयत्तेन ''अधीनो निध्न आयत्तोऽस्वच्छंदौ गुहकोऽप्यसौ''। इत्यमरकोशकारेण उक्तम्। अत्र षष्ठी तत्पुरुष समासः। अर्थात् निद्रया वशीभूतेन मया महान् अत्यधिकं पुण्यमयसमयो– धर्मकर्मानुष्ठानयोग्यत्वात् महान् पवित्र' समय–कालः अतिवाहितः व्ययीकृतः। यथोक्तम् मनुस्मृतिकारेण–

''नोपतिष्ठति यःपूर्वां' नोपास्ते यश्चपश्चिमाम्। स शूद्रवद्बहिष्कार्यः सर्वस्माद् द्विजकर्मणः''।। (मनु.–अ0–2)

अयम् – एषः अस्मद् – मदीयः गुरुचरणानां – आचार्यपादानाम् संध्योपासनसमय– संध्योपासनायाः संध्यावंदनस्य समयः कालः तत् – तस्माद् कारणात् सपदि– शीघ्रं सत्वरं वा ''स्रग्झटित्यिञ्जसाऽह्नाय द्राङ् मङ्क्षु सपदि द्रुते। सद्यः सपदि तत्क्षणे।'' इत्यमरः, कुसुमानि– पुष्पाणि अवचिनोमि– चयनं करोमि, इति – एवं प्रकारेण चिन्तयन्– विचारं कुर्वन् एकम्–एकसंख्याकम् कदलीदलम् कदल्याः– रम्भायाः दलं– पत्रम् आकुञ्चय– आच्छिद्य, तृणशकलैः– बालतृणखण्डैः सन्धाय–संयोज्य पुटकं– कुसुमस्थापनाय 'दोना' इत्याख्य पात्रम् विधाय– कृत्वा पुष्पावचयं– पुष्पाणां–कुसुमानाम् अवचयं–लवनं कर्तुम् विधातुम् आरेभे– समारब्धवान्। अत्र कदलीदलम्, तृणशकलैः इत्यत्र षष्ठीतत्पुरुषसमासः वर्तते।

असौ– पूर्ववर्णितः अयं बटुः–ब्राह्मणबालकः आकृत्या– आकारेण सुन्दरः–

मनोहरः वर्णेन– रङ्गेन गौरः–गौरवर्णीयः, अत्र ''प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम्'' इत्यनेन वार्तिकेण तृतीया, जटाभिः– सटाभिः ब्रह्मचारी–ब्राह्मणवटुः, अत्र इत्थंभूतलक्षणे'' इत्यनेन नियमेन तृतीया अस्ति। वयसाअवस्थया षोडषवर्षदेशीयः– ईषद्समाप्तषोडशवर्षः– ''ईषदसमाप्तौ कल्पब्देशीयः– ''इति नियमेन अत्र देशीयरः प्रत्ययः आगच्छति, कम्बुकण्ठः– कम्बुरिव कण्ठो यस्य सः कम्बुकण्ठ– बहुब्रीहि समासोऽत्र अर्थात् शङ्खग्रीवः, आयतलालटः आयतं– विस्तृतं ललाटं– मस्तकप्रदेशं चासौ– कर्मधारय समासोऽत्र अर्थात् दीर्घललाटकः, सुबाहुः– शोभनौ बाहूयस्य सः सुबाहुः शोभनभुजः ''संख्यासुपूर्वस्य'' इत्यनेन अत्र बहुव्रीहिसमास, विशाललोचनः– विशालेलोचने यस्य सः विशाललोचनः (बहु0 समासः)– आयतनयनः च आसीत्।

अस्मिन् गद्यखण्डे 'कम्बुकण्ठः' इत्यत्र लुप्तोपमा अलङ्कारः, अस्ति। एवं ब्रह्मचारिणः अवयवानां स्वाभाविकं उदात्तं च वर्णनेन उदात्तालङ्कारो अपि अस्ति। लुप्तोपमा लक्षणम्– ''औपम्यवाचिनो लोपे समासे क्विपि च द्विधा''।

हिन्दी अनुवाद– अरे आश्चर्य है, मैं बहुत देर तक सोता रहा। निद्रारूपी जाल के अधीन होने से (मैनें) अत्यन्त पुण्यमय समय को (व्यर्थ में) व्यतीत कर दिया। यह हमारे पूज्य आचार्यपाद का संध्योपासना का समय है; अतएव शीघ्र ही फूलों को चुनकर रखता हूँ' ऐसा (मन में) सोचते हुए (उस विप्रवटु ने) केले के एक पत्ते को तोडकर, बालतृणखण्डों से उसे जोडकर दोना बनाकर पुष्पों को चुनना (तोडना) प्रारम्भ किया। वह ब्राह्मण बालक आकृति से सुन्दर (मुख वाला), वर्ण से गौर, जटाओं से ब्रह्मचारी, उम्र में लगभग सोलहवर्ष का, शंङ्ख जैसी ग्रीवा वाला, चौडे ललाट (मस्तकप्रदेश) वाला, सुन्दर भुजाओं वाला और विशाल नेत्रों वाला था।

विशेष– 1 भारतीय संस्कृति में ब्राह्ममुहूर्त में उठना और स्नान करके संध्यावंदन आदि नित्यकर्म को संपादित करना ब्रह्मचारी विद्यार्थियों एवं गुरुजनों के लिये आवश्यक कृत्य था। अतएव कहा गया है– ''ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत धर्मार्थं

च चिन्तयेत।'' मनुस्मृति में अध्याय– 2 में कहा गया है कि जो प्रातः एवं सायंकाल में शीघ्र उठकर संध्योपासना नहीं करता वह द्विज कार्य से बहिष्कृत हो जाता है। इसीलिए ब्राह्मण बालक देर से उठने का पश्चात्ताप व्यक्त कर रहा है।

शिवराज विजयः– कदलीदलकुञ्जायितस्य एतत्कुटीरस्य समन्तात् पुष्पवाटिका, पूर्वतः परमपवित्रपानीयं परस्सहस्त्रपुण्डरीकपटलपरिलसितं पतत्रिकुलकूजितं पयः पूरितं सर आसीत्। दक्षिणतश्चैको निर्झरझर्झरध्वनिध्वनितदिगन्तरः फलपटलास्वादचपलितपतङ्गकुलाक्रमणाधिक– विनतशाखशाखिसमूहव्याप्तः सुन्दरकन्दरः पर्वतखण्ड आसीत्।

संस्कृत व्याख्या– अस्मिन् गद्यांशे व्यासमहोदयेन पर्णकुट्याःसमीपे स्थितस्य प्रकृतेः नैसर्गिकं सौन्दर्यं चित्रितवान् – कदलीदलकुञ्जायितस्य– कदल्याः दलेन– रम्भापलाशसमूहेन कुञ्जायितस्य कुञ्जीभूतस्य एतत् – पूर्वोक्तस्य पर्णोटजस्य पर्णमयी कुट्याः समन्तात् परितः पुष्पवाटिका– पुष्पाणां कुसुमानां वाटिका उद्यानम् (षष्ठीतत्पुरुष) पूर्वतः– प्राच्याम् दिशि, परमपवित्रं – अत्यन्तपूतम् 'परम् पवित्रं पानीयं यस्मिन् तत् (बहुव्रीहिसमासः); सहस्राधिकैः पुण्डरीकानां श्वेतकमलनां पटलेन समूहेन तैः परिलसितम् – परितः लसितम् सुशोभितम्। तत्पुरुष समासगर्भक बहुव्रीहिः ''पुण्डरीकं सिताम्भोजम् इत्यमरः'' पतत्रिकुलकूजितं पतत्रिणां– पक्षिणाम् कुलस्य–समूहस्य कूजितेन– कलरवे पूजितं शोभितम् च पयः पूरितम् पयसा–जलेन पूरितम्– आधिक्येन भरितम् सरः तडागः आसीत् – विद्यते स्म। दक्षिणत श्चैको– दक्षिणतः– दक्षिणस्यां दिशि च एकः निर्झरझर्झरध्वनिध्वनितदिगन्तरः– निर्झरस्य वारिप्रवाहस्य ''वारिप्रवाहोनिर्झरो झरः'' इत्यमरः, झर्झरध्वनि–झर्झर इति निनादेन शब्देन वा ध्वनितानि– शब्दायमानानि दिगन्तराणि – दिशाभागाः यस्य सः, फलपटलास्वाद–चपलितः– फलानां पटलस्य समूहस्य आस्वादः– भक्षणं तेन चपलितः– चञ्चलीकृताः चञ्चवः येषां तेषां कुलस्य – समूहस्य क्रमणेन–

पादविक्षेपेण अधिकं विनताः विनम्रीभूताः शाखाः येषां ते शाखिनः– वृक्षाः तेषां समूहेन– पटलेन व्याप्तः– समावृतः सुन्दरकन्दरः सुन्दरा–रमणीया कन्दरा गुहा यस्य सः ''दरी तु कन्दरो वास्त्री'' इत्यमरः, पर्वतखण्डः– पर्वतस्य–गिरेः खण्डः– शकलम् आसीत्–विद्यते।

अस्मिन् गद्यखण्डे गौडीरीतिः अस्ति– तल्लक्षणं–''गौडी डम्बरबद्धा स्याद्'' प्रसादगुणः, लुप्तोपमा अनुप्रासश्चालङ्काराः सन्ति। 'वर्णसाम्यमनुप्रासः' इति अनुप्रासलक्षणम्। 'औपम्यवाचिनोलोपे समासे क्विपि च द्विधा।' इति लुप्तोपमालक्षणम्। ''चित्तं व्याप्नोति यः क्षिप्रं शुष्केन्धनमिवानलः। स प्रसादः समस्तेषु रसेषु रचनासु च।'' इति प्रसादगुणलक्षणम्।।

हिन्दी अनुवाद– केले के वृक्षों के समूह से घिरी होने से कुञ्ज जैसी प्रतीत होने वाली इस कुटिया के चारों ओर एक पुष्पवाटिका थी, (जिसके) पूर्व की ओर अत्यन्त पवित्र जलवाला, हजार से अधिक (सहस्रों) श्वेतकमलों के समूह से समलङ्कृत, पक्षिसमूह के कूजन (कलरव) से सुभोभित, जलाधिक्य से सम्पूरित (भरा हुआ) एक सरोवर था। कुटी के) दक्षिण की ओर (अपनी) झर्झर ध्वनि से दिशाओं के अन्तराल को ध्वनित करने वाला एक झरना था, फलसमूह के आस्वाद से चञ्चल पक्षिसमूह के पादविक्षेप (क्रमण) से झुकी हुई शाखाओं वाले वृक्षों के समूह से व्याप्त सुन्दर कन्दराओं (गुफाओं) वाला एक पर्वतखण्ड (पहाडी) था।

विशेष– 1 इस गद्यांश में कदली समूह को कुञ्ज जैसा मानने के कारण यहाँ लुप्तोपमा अलङ्कार है।

2. सम्पूर्ण गद्यखण्ड में अनुप्रास की छटा दर्शनीय है।

3. पं. अम्बिकादत्त व्यास जी ने यहाँ प्रकृति का मनोरम चित्रण किया है। इस चित्रण के हेतु यहाँ गौडी रीति का प्रयोग किया है। इन पंङ्क्तियों में प्रसाद गुण की छटा दर्शनीय है।

शिवराजविजय– यावदेष ब्रह्मचारीबटुरलिपुञ्जमूद्धूय कुसुमकोरकानवचिनोति, तावत् तस्यैव सतीर्थ्योऽपरस्तत्समानवयाः कस्तूरिकारेणुरूषित इव श्यामः, चन्दनचर्चित भालः, कर्पूरागुरु– क्षोदच्छुरितवक्षो बाहुदण्डः, सुगन्धपटलैरुन्निद्रयन्निव निद्रामन्थराणि कोरकनिकुरम्बकान्तरालसुप्तानि मिलिन्दवृन्दानि झटिति समुपसृत्य निवारयन् गौरवटुमेवमवादीत् –

संस्कृत व्याख्या– अस्मिन् गद्यखण्डे व्यास महोदयेन पुष्पचयनस्य काले कलिकानां मध्ये सुप्त मिलिन्दवृन्दाणां जागरण मनोहारि चित्रणं कृतवान्–

यावत् – यावत् कालपर्यन्तं एष– अयम् ब्रह्मचारिवटुः ब्रह्मव्रती बाह्मणबालकः, अलिपुञ्जम्– भ्रमरसमूहम्, उद्धूय– निवार्य दूरीकृत्य वा कुसुमकोरकान्– कुसुमानां–पुष्पाणां कोरकान्– कुड्मलान् अवचिनोति– सङ्कलनं करोति, तावत्– तस्मिन्नेव काले तस्यैव– तस्य वटो एवं, अपरः–द्वितीयः सतीर्थ्यः–सहाध्यायी, तत्समानवयाः तस्य समान एव अवस्थायुताः कस्तूरिकारेणुरुषितः कस्तूरिकायाः– मृगनाभिगन्धस्य रेणुभिः रजोधूलिभिः रूषित इव–क्षुरित इव श्यामः– श्यामवर्णः, चन्दनचर्चितभालः– चन्दनेन चर्चितं– शोभितं भालं ललाटप्रदेशं यस्य सः (बहु0 समासः), कर्पूरागुरुक्षोदक्षुरितवक्षोबाहुदण्डः– कर्पूरस्य–घनसारस्य अगुरोश्च– अगरसंज्ञक द्रव्यविशेषस्य च क्षोदेन– चूर्णेन क्षुरितं व्याप्तं वक्षो–उरः भुजदण्डो बाहुदण्डः च यस्य सः, सुगन्धपटलैः– सौरभपुञ्जैः उन्निद्रयन्निव जागरयन् इव निद्रामन्थराणि– निद्रया अलसितानि, कोरकनिकुरम्बकान्तरालसुप्तानि– कोरकाणां – कलिकानां निकुरम्बकानि– वृन्दानि तेषाम् अन्तराले–मध्ये सुप्तानि–निद्रायितानि, मिलिन्दवृन्दानि–भ्रमरसंमूहानि झटिति–शीघ्रमेव, समुपसृत्य– समीपम् आगत्य निवारयन्– वारयन् गौरवटुः गौरबह्मचारि, एवं– इत्थं अनेन वा प्रकारेण, अवादीत्– अवदत्– अत्र ''कस्तूरिकारेणुरुषित इव'' इत्यंशे '' च 'इव' निपातः उत्प्रेक्षालङ्कारस्य वाचकः अस्ति। तल्लक्षणं – ''सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्''। इत्यस्ति। एवं चन्दनागुरुकस्तूरिकाया सुगन्धेन आकर्षितानां

भ्रमरसमूहाणां पुष्पेभ्यः जागरणस्य स्वाभाविकं वर्णनमपि अस्ति; अतोऽत्र स्वभावोक्ति अलङ्कारोऽपि वर्तते। तल्लक्षणम्– 'स्वभावोक्तिस्तु डिम्भादेः स्वक्रियारूपवर्णनम्''। मध्ये– मध्ये अनुप्रासस्यापि छटा दर्शनीयास्ति। तल्लक्षणम्– 'वर्णसाम्यमनुप्रासः'। अत्र प्रसादगुणः, वैदभीरीतिः।

हिन्दी अनुवाद– जिस समय यह ब्रह्मचारीबटु भ्रमरसमूह को उडाकर फूलों की कलियों को चुन रहा था; उसी समय उसी के साथ पढ़ने वाला दूसरा (सहपाठी); जो उसके समान अवस्थावाला था (और जो) कस्तूरी के चूर्ण से लिप्त हुए के समान श्यामवर्ण का था, (जिसका) ललाट चन्दन से अलङ्कृत था (जो) कर्पूर और अगर के चूर्ण से लिप्त वक्षस्थल और भुजाओं से युक्त था नींद के कारण आलस्य युक्त कलियों के समूह के मध्य सोये हुए भ्रमरों के समूह को सौरभसमूह से मानों जगाता हुआ सा शीघ्रता से (उस श्यामवटु के) समीप जाकर (उसे पुष्प चयन से) रोकता हुआ गौरवटु इस प्रकार बोला–

विशेष– इस गद्यखण्ड के ''कस्तूरिका रेणुरूषित इव '' तथा ''सुगन्धपटलैरु न्निद्रयन्निव'' इत्यादि में प्रयुक्त उत्प्रेक्षा का वाचक होने से यहाँ उत्प्रेक्षालङ्कार है। एवं भ्रमरसमूह के पुष्पों के मध्य से उडकर जाने का स्वाभाविक वर्णन होने से स्वाभावोक्ति अलङ्कार है। ''स्वभावोक्तिस्तु डिम्भादेः स्वक्रियारूपवर्णनम्।'' यह स्वभावोक्ति का लक्षण है।

शिवराजविजयः– ''अलं भो! अलम्।'' मयैव पूर्वमवचितानि कुसुमानि, त्वं तु चिरं रात्रावजागरीरिति क्षिप्रं नोत्थापितः, गुरुचरणा अत्र तडागतटे सन्ध्यामुपासते, संस्थापिता मया निखिला सामग्री तेषां समीपे। यां च सप्वर्षकल्पाम्, यावनश्त्रासेन निःशब्दं रुदतीम्, परमसुन्दरीम्, कलितमानवदेहामिव सरस्वतीं सान्त्वयन् मरन्दमधुरा अपः पाययन्, कन्दखण्डान् भोजयन् त्वं त्रियामायायामत्रयमनैषीः, सेयमधुना स्वपिति उद्बुद्धय च पुनस्तथैव रोदिष्यति, तत् परिमार्गणीयान्येतस्याः पितरौ गृहं च इति संश्रुत्य उष्णं निःश्वस्य यावत् सोऽपि किञ्चिद् वक्तुमियेष तावदकस्मात् पर्वतशिखरे निपपात उभयोर्दृष्टिः।

संस्कृत व्याख्या – अलं भो अलम् हे सुहृदवर पुष्पावचयं मा कुरु इत्यर्थः। अत्र 'अलम्' इति निपातस्य प्रयोगम्' वर्तते ''अलं भूषणपर्याप्तिवारणवाचकः'' इत्यमरः। अत्र अलं वर्जनार्थकमस्ति। मयैव–मया पूर्वोक्तं श्यामवटुना पूर्वम्–आदौ एव कुसुमानि–पुष्पाणि, अवचितानि– सङ्कलितानि, त्वं–गौरवटुस्तु चिरं–चिरकालपर्यन्तम् रात्रौ–रजन्याम् अजागरीः– जागरणं कृतवान्, इति अस्माद् हेतोः क्षिप्रं–शीघ्रं, न उत्थापितः– न जागरितः, गुरुचरणाः– पूज्यगुरुवर्याः अत्र– इह, तडागतटे– सरोवरतीरे सन्ध्याम्– प्रातः कालिकसन्ध्यां पूजनं वा उपासते– समाचरन्ति। अतः मया– श्यामवटुना, निखिल सामग्री– निखिला– सर्वा पूजाहेतोः आवश्यकसामग्री, तेषां– गुरुचरणानां, समीपे–निकटे संस्थापिताः– समुपकल्पिताः। यां– पूर्वदृष्टां श्रुतां सेवितां च सप्तवर्षकल्पाम्– सप्तवर्षदेशीयां कन्यां ''ईषदासमाप्तौ कल्पब्देशीयरः'' इत्यनेन नियमेन अत्र 'कल्पप्' इति प्रत्ययः कृतः। यावनत्रासेन यवानां त्रासेन–भयेन, निःशब्दं–शब्दरहितम्, रुदतीं–रोदनं कुर्वतीम्– अत्र 'उगितश्च' इत्यनेसूत्रेण ङीप् प्रत्ययः कृतवन्तः, तादृश परमसुन्दरीम्– परमाचासौ सुन्दरीम् (कर्मधारय समासः) परम–अत्यन्त सुन्दरीम्, कलितमानवदेहाम्–कलितो धृतः मानवो देहः यया सा ताम् (बहुब्रीहिसमासः) अपः– जलानि पाययन् पानं कारयन्, कन्दखण्डानि– मुनीनां खाद्यरूपेण विहितानि कन्दमूलविशेषाणां खण्डान्– भागान्, भोजयन्–भक्षयन्, त्वं भवान् त्रियामायाः– निशायाः यामत्रयम्– प्रहरत्रयम् अनैषीः यापितवान् असि सेयम् – सा एव बालिका अधुना– इदानीम् ,स्वपिति–शयनं करोति, उद्बुध्य– उन्निद्रय च पुनः तथैव– तेन पूर्वोक्त प्रकारेणैव, रोदयिष्यति विलापं रोदनं वा करिष्यति, तत्– तस्माद् कारणात्, एतस्याः यवनत्रस्त बालिकायाः, पितरौ–माता–पिता च गृहम्– गेहम् च परिमार्गणीयानि– अन्वेष्टव्यानि'' इति– एवम्, संश्रुत्य समाकर्ण्य उष्णं निःश्वास्य– अशीतं उच्छ्वस्य यावत्–यावत् कालपर्यन्तम् सोऽपि गौरवटुरवि किञ्चित् वक्तुं– कथयितुं, इयेष– इच्छति स्म, तावत्– तावत् काल एव, अकस्मात्– सहसा, पर्वतशिखरे– पर्वतस्य शृङ्गे,

उभयोः– गौरवटुश्याम वट्वोश्च, दृष्टिः– वीक्षणं निवपात अपतत् । अस्मिन् गद्यखण्डे व्यासमहोदयेन 'चूर्णक' संज्ञक गद्यविधायाः प्रयोगम् अकरोत्। तल्लक्षगम् – अनाविद्धपदं चूर्णम्' इति आचार्य वामनेन कृतम् एवं आचार्य विश्वनाथ महोदयेन 'तुर्यं चाल्पसमाकम्'' इति कृतं साहित्यदर्पणे।

अत्र प्रसादगुणः। वैदर्भीरीतिः 'वैदर्भीललितक्रमा' इति वैदर्भी रीतेः लक्षणम् प्रसिद्धम्।

हिन्दी अनुवाद– अरे (भ्राता) रुको, रुक जाओ, मैने पहले ही फूल चुन लिये हैं। (क्योंकि) तुम तो देर रात तक जागते रहे हो (इसलिये मैने तुम्हें) शीघ्र नहीं उठाया। यहाँ तालाब के किनारे पूज्य गुरु जी सन्ध्योपासना कर रहे हैं। मैंने समस्त (आवश्यक) पूजा सामग्री उनके पास रख दी है।और यवनों के डर से निःशब्द रोती हुई, परमसुन्दरी मानों मानवशरीर को धारण करने वाली सरस्वती जैसी सप्तवर्षीया जिस (कन्या) को सान्त्वना देते हुए, मकरन्द से मधुर जल को पिलाते हुए, कन्दमूल के टुकड़ो को खिलाते हुए तुमने रात्रि के तीन प्रहर बिता दिये थे;– इस समय वह सो रही है और जागकर पुनः वैसे ही रोयेगी; अतएव इसके माता–पिता की और (इसके) घर की हमें खोज करनी चाहिए– यह सुनकर गर्म (उष्ण) और दीर्घ निःश्वास लेकर जब उस (गौरवटु) ने कुछ कहना चाहा; तभी उन दोनों की दृष्टि अकस्मात् (उस पूर्वोक्त) पर्वतशिखर पर पडी।

विशेष– इस गद्यखण्ड में पं0 अम्बिकादत्त व्यास जी नें वृत्तक या चूर्णक शैली की गद्यविधा का प्रयोग किया हैं। यह गद्य–विधा छोटे–छोटे समासों वाली होती है। जिसका लक्षण है। ''अकठोराक्षरं स्वल्पसमासं वृत्तकं मतम्। एतदेव चूर्णकमुच्यते।'' आचार्य वामन ने '' अनाविद्धपदम् चूर्णम् '' ऐसा लक्षण चूर्णक गद्य का किया है।

शिवराजविजयः– तस्मिन् पर्वते आसीदेको महान् कदरः। तस्मिन्नेव महामुनिरेकः समाधौ तिष्ठति स्म। कदा स समाधिमङ्गीकृतवानिति कोऽपि न

वेत्ति। ग्रामणीग्रामीणग्रामाः समागत्य मध्ये–मध्ये तं पूजयन्ति, प्रणमन्ति, स्तुवन्ति च। तं केचित् कपिल इति अपरे लोमश इति, इतरे जैगीषव्य इति अन्ये च मार्कण्डेय इति विश्वसन्ति स्म। स एवाधुना शिखरादवतरन् ब्रह्मचारिवटुभ्यामदर्शि।

''अहो प्रबद्धो मुनिः प्रबुद्धो मुनिः इत एवागच्छति, इत एवागच्छति सत्कार्योऽयम्, सत्कार्योऽयम्'' इति तौ सम्भ्रान्तौ बभूवतुः।

संस्कृत व्याख्या– तस्मिन् – पूर्वोक्ते, पर्वते– शैली शिखरे एकः– एकसंख्याकः, कन्दरः–गुहा स्थितोऽऽसीत्। तस्मिन्नेवतस्मिन् पूर्वोक्ते गुहायामेव, एकः महामुनिः–परमतपस्वीमहर्षिः समाधौ– चित्तवृत्तिनिरोधात्मके योगसमाधौ, तिष्ठतिस्म संस्थितः आसीत्। सः मुनिः कदा– कस्मिन् काले समाधिम् अङ्गीकृतवान् स्वीकृतवान् इति इदं वृत्तान्तं–कोऽपि– कश्चिदपि जनो, न वेत्ति– नहि जानाति।

ग्रामणीग्रामीणग्रामाः– ग्रामण्यः– ग्रामाधिपः ग्रामीणाः– ग्रामेभवः ग्रामीणः– 'ग्रामाद्यखञौ'– इति नियमात्– ग्रामीणानां ग्रामः– समूहः, मध्ये–मध्ये किञ्चित् समयानन्तरं, समागत्य समुपेत्य आगत्य वा, तं– समाधिस्थं मुनिं पूजयन्ति– पूजां कुर्वन्ति, प्रणमन्ति– प्रणामं कुर्वन्ति, स्तुवन्ति– स्तुतिं कुर्वन्ति च। केचित् केचन जनाः तं– समाधिरतं मुनिम् कपिल इति एते कपिलमुनिः अस्ति, अपरे लोमश इति इतरे– अन्ये, जैगीषव्य इति एतन्नाम मुनिम् इति केचित् – केचन अन्ये च मार्कण्डेयः एतदाख्यः मुनिरयं इति च आकलयन्ति विश्वसन्ति च। स एव– तादृश महर्षिरेव अयम्– एषः अधुना– इदानीम्– 'एतर्हिसम्प्रतीदानीमधुना साम्प्रतं तथा' इत्यमरः, शिखराद् पर्वतशिखरात् अवतरन् अधोऽऽगच्छन् ब्रह्मचारिबटुभ्याम् गौरवटुश्यामवटुभ्याम अदर्शि– दृष्टवन्तौ।

अहो– साश्चर्यम् खेदम्, मुनिः– महर्षिः प्रबुद्धः– जागृतः, इत एव– इतः एव अर्थात् आश्रमाभिमुखमेव आयाति– आगच्छति आगमनं करोतीत्यर्थः। सत्कार्योऽयम् इति– एवं, तौ– उभौ ब्रह्मचारिणौ सम्भ्रान्तौ– क्षुभितौ, बभूवतुः– जातौ। अस्मिन् गद्यखण्डे उल्लेखालङ्कारः अनुप्रासश्चालङ्कारौ। तल्लक्षणम् – ''बहुभिर्बहुधोल्लेखादेकस्योल्लेख इष्यते।।'' 'ग्रामणी'. इत्यत्र श्रुत्यानुप्रासः,

तल्लक्षणम् – ''उच्चार्यत्वादेकत्र स्थाने तालुरदाधिके सादृश्यं व्यञ्जनस्यैव श्रुत्यानुप्रास उच्यते''।

हिन्दी अनुवाद– उस पर्वत में एक विशाल गुफा थी। उसी (गुफा) में एक महामुनि समाधि में स्थित थे। उन्होंने कब समाधि प्रारम्भ की – ऐसा कोई भी नहीं जानता (था)। गाँवों में रहने वाले ग्रामाधिप और ग्रामीणों के समूह बीच–बीच में आकर उनकी पूजा करते थे, उन्हें प्रणाम करते थे, अन्य (लोग) (ये) लोमश ऋषि हैं– ऐसा (कहते थे); उनको कोई कपिल मानते थे तो दूसरे लोग ये जैगीषव्य है और अन्य (लोग) ये मार्कण्डेय ऋषि हैं– ऐसा विश्वास करते थे। उन्हीं (मुनि) को इस समय पर्वत शिखर से उतरते हुए ब्रह्मचारी बालकों ने देखा।

''अरे (अहो आश्चर्य है) मुनि (समाधि से) जाग गये (और) इधर ही आ रहे हैं; इधर ही आ रहे हैं, ये सत्कार के योग्य हैं; यह सत्कार के योग्य है'' इस प्रकार वे दोनो हर्ष से व्याकुल हो गये।

विशेष – 1 इस गद्यखण्ड में भी चूर्णक शैली के गद्य का प्रयोग हुआ है। 1.2 इस गद्यांश में संभावित लोमश, कपिल जैगीषव्य तथा मार्कण्डेय मुनि की गणना चिरञ्जीवी मुनियों में होती है। एक का अनेकशः उल्लेख होने से यहाँ उल्लेख अलङ्कार है एवं– 'ग्रामणीग्रामीणग्रामा' में श्रुंत्यानुप्रास है। यहाँ प्रसादगुण एवं वैदर्भी रीति है।

शिवराजविजयः– अथ समापितसंध्यावन्दनादिक्रिये समायाते गुरौ, तदाज्ञयानित्यनियमसम्पादनाय प्रयाते गौरबटौ, छात्रगण– सहकारेण प्रस्तुतासु च स्वागतसामग्रीषु ''इत आगम्यतां सनाथ्यतामेष आश्रमः'' इति सप्रणामभिगम्य वदत्सु निखिलेषु, योगिराज आगत्य तन्निर्दिष्टकाष्ठपीठं भास्वानिवोदयगिरिमारुरोह, उपाविशच्च तस्मिन् पूज्यमाने ''योगिराडुत्थित'' इति ''आयात'' इति च आकर्ण्य कर्णपरम्परया बहवो जनाः परितः स्थिताः। सुघटितं शरीरम्, सान्द्रां जटाम्, विशालान्यङ्गानि, अङ्गारप्रतिमे नयने, मधुरां गम्भीराम् च वाचम् वर्णयन्तश्चकिता

इव सञ्जाताः।

संस्कृतव्याख्या– अस्मिन् गद्यखण्डे व्यासमहोदयेन ब्रह्मचारिणामाश्रमे आगतवान् योगिराजः कीदृग् दृश्यते; इति वर्णनं चकार। अथ–तदनन्तरम्, समापितसन्ध्यावन्दनादिक्रिये– समापिता पूर्णीकृता सन्ध्यावन्दनादिक्रिये, गुरौ– आचार्ये, समायाते– समागते सति, तदाज्ञया– तन्निर्देशेन, नित्यनियमसम्पादनाय आह्निक सन्ध्यावन्दनादिकर्तुं, प्रयाते–गते, गौरवटौ– गौरब्रह्मचारिणि, छात्रगणसहकारेण– शिष्यसमुदायसाहाय्येन प्रस्तुतासु– उपकल्पितासु च स्वागतसामग्रीषु– स्वागतद्रव्येषु, 'इतः–अत्र आगम्यताम्–' आयातु, सनाथ्यताम् – अलङ्क्रियताम्, एषः– अयम्, आश्रमः तपस्विस्थानम्,' इति–एवं प्रकारेण, सप्रणामम्– प्रणामेन सहितम्, अभिगम्य,– समागत्य, वदत्सु– कथयत्सु, निखिलेषु–सर्वेषु समुपस्थितेषु, योगिराजः– महामुनिः, आगत्य–समागम्य, तन्निर्दिष्टकाष्ठपीठम्–मुनिसङ्केतितकाष्ठमयीचतुष्पादिकाम्,भास्वान्– भास्कर, इव– यथा, उदयगिरिम्– उदयाचलम्, आरुरोह– आरोहणं चकार, उपाविशच्च–आसितवांश्च।

तस्मिन्– योगिराजे, पूज्यमाने–अर्च्यमाने, 'योगिराडुत्थित'' महामुनिः समुत्थित इति, आयातः– समागतः, –इति च– एवं च, आकर्ण्य– श्रुत्वा, कर्णपरम्परया– श्रुतिसरण्या, बहवः– बहुसंख्याकाः जनाः मानवाः, परितः– सर्वत; स्थिताः सम्प्राप्ताः। सुघटितं– शोभनाङ्गसंस्थानम्, शरीरं– वपुः, सान्द्रां– घनाम्, जटाम्– सटाम, विशालान्यङ्गानि– दीर्घायतानि अवयवान्, अङ्गारप्रतिमे– अङ्गारसदृशे, नयने–लोचने, मधुरां– मनोहराम्, गम्भीरां च वाचम्– वाणीम्, वर्णयन्तः– कथयन्तः, चकिताः– आश्चर्ययुक्ताः इव सञ्जाताः– संवृत्ताः।

हिन्दीरूपान्तर– इसके अनन्तर सन्ध्यावन्दनादि (नित्य कर्म) समाप्त कर चुके गुरु के आने पर, उनकी आज्ञा से नित्य नियम (सन्ध्यावन्दनादि) के सम्पादन के लिए गौरवटु के चले जाने पर, छात्र समूह की सहायता से स्वागत सामग्री के उपस्थित होने पर ''इधर आइये'', ''इस आश्रम को सनाथ कीजिए''

ऐसा प्रणाम सहित सभी लोगों के द्वारा कहे जाने पर, योगिराज आकर उनके द्वारा निर्दिष्ट काष्ठ की चौकी पर उदयाचल पर स्थित सूर्य की भांति चढ़कर बैठ गये।

उनके (योगिराज के) पूजन के समय ही ''योगिराज उठ गये हैं'' और ''आये हैं'' – ऐसा एक दूसरे (की कर्णपरम्परा) से सुनकर बहुत से लोग (वहाँ) चारों ओर एकत्र हो गये, (उनके) सुगठित शरीर, घनी जटाओं, विशाल अङ्गों, अङ्गारसदृश (लाल) नेत्रों तथा मधुर और गम्भीर वाणी की प्रशंसा करते हुए लोग आश्चर्यचकित से हो गये।

शिवराजविजय– अथ योगिराजं सम्पूज्य यावदीहितं किमपि आलपितुम्, तावत् कुटीराद् अश्रूयत् तस्या एव बालिकायाः सकरुणरोदनम्।

ततः ''किमिति? कुत इति ? केय मिति? कथमिति?'' पृच्छापरवशे योगिराजे किञ्चिदपि, आलपितुम्, – वक्तुम्, यावद्– यावत्कालपर्यन्तम्, ईहितम्– चेष्टितम्, तावत्– तावदेवकाले, कुटीरात्– पर्णकुटीरात्, तस्या एव– पूर्ववर्णितायाः कन्याया एव, सकरुणम् शोकयुक्तम्, रोदनम्– विलापम्, अश्रूयत– श्रवणपथमायातम्।

संस्कृतव्याख्या– ततः– कन्यकारोदनस्य श्रवणानन्तरम्, किमिति– किमर्थं क्रन्दनम् इति, कुत इति? – कस्मात् स्थानात् विलापध्वनि आगच्छति इत्यर्थः, केयम्– का इयम् क्रन्दनकारिणी बाला नारी वा, कथम् इति– किं कारणं रोदनम् अस्या इति प्रकारेण'', पृच्छापरवशे– प्रश्नपरवशे, योगिराजे–ऋषिवरे, ब्रह्मचारिगुरुणा– गौरश्यामबटुगुरुणा मुनिना, बालिकां– रोदनकर्त्रीं कन्यकाम्, सान्त्वयितुम्– आश्वासयितुम्, श्यामबटुम्– श्यामवर्णं ब्रह्मचारिणम्, आदिश्य– आज्ञाप्य, कथितम्– उक्तम् अग्रे वक्ष्यमाणं वाक्यम् इत्याशयोऽत्र।

हिन्दीरूपान्तर– तदनन्तर योगिराज का यथोचित रीति से सत्कार करके ब्रह्मचारियों के गुरु ने जैसे ही (योगिराज से) कुछ कहने की चेष्टा की;

वैसे ही कुटी से उसी पूर्वोक्त बालिका का करुणरोदन सुनाई पड़ा।

तत्पश्चात् योगिराज यह क्या है? यह (रोने का स्वर) कहाँ से आ रहा है? यह (बालिका) कौन है? इसके रोने का क्या कारण है? इस प्रकार योगिराज के प्रश्न (जिज्ञासा) के अधीन होने पर ब्रह्मचारियों के गुरु ने बालिका को शान्त कराने हेतु श्यामबटु को आदेश देकर कहा–

विशेष– इस गद्यांश में पं0 अम्बिकादत्त व्यास ने चूर्णक शैली के गद्य का प्रयोग किया है। जिसका लक्षण है – ''अकठोराक्षरं स्वल्पसमासं चूर्णकम् मतम्।''

शिवराजविजय– 'भगवन् श्रूयतां यदि कुतूहलम्। ह्यः सम्पादितसायन्तन कृत्ये, अत्रेव कुशास्तरणमधिष्ठिते मयि, परितः समासीनेषु छात्रवर्गेषु, धीरसमीरस्पर्शेन मन्दमन्दमान्दोल्यमानाषु व्रततिषु, समुदिते यामिनीकामिनीचन्दनबिन्दौ इव इन्दौ, कौमुदीकपटेन सुधाधारामिव वर्षति गगने, अस्मिन्नीतिवार्तां शुश्रुषुषु इव मौनमाकलयत्सु पतङ्गकुलेषु, कैरवविकाशहर्षप्रकाशमुखरेषु चञ्चरीकेषु, अस्पष्टाक्षरम्, कम्पमान निःश्वासन्, श्लथकण्ठम्, घर्घरितस्वनम्, चीत्कारमात्रम्, दीनतामयम्, अत्यवधानश्रव्यत्वादनुमितदविष्ठतं क्रन्दनमश्रौषम्।

संस्कृत व्याख्या– अस्मिन् गद्यांशे व्यासमहोदयेन सायंकालीन आश्रमसुषमायाः बालिकारुदनस्य च स्वाभाविकचित्रणम् कृतवान्– '' भगवन्– हे ऐश्वर्यशाली महर्षे, यदि – चेत्, कुतूहलम्– औत्सुक्यमस्ति 'कौतूहलं कौतुकं कुतुकञ्च कुतूहलम्' इत्यमरः'' वृतान्तज्ञानस्य (तर्हि) श्रूयताम्– आकर्ण्यताम्, ह्यः– विगतवासरे, सम्पादितसायन्तनकृत्ये– सम्पादितं विहितं सायन्तनकृत्यं सन्ध्यादि येन तादृशे, अत्रैव– अस्मिन्नेव स्थले, कुशास्तरणम्– कुशैः निर्मितासनम्, मयि– मुनौ, अधिष्ठिते– अलङ्कृते, परितः– सर्वतः छात्रवर्गेषु– शिष्यगणेषु, समासीनेषु– अधिष्ठितेषु, धीरसमीरस्पर्शेन– मन्दपवनस्पर्शेन, व्रततिषु– लतासु, वल्लीतुव्रततिर्लता' इत्यमरः मन्दंमन्दम्– शनैः– शनैः, आन्दोल्यमनासु– संचाल्यमानासु, समुदिते– समधिगते उदयाचले, यामिनीकामिनीचन्दबिन्दौ–

रजनीरूपाकान्तायाः ललाटेचन्दनतिलकमिव प्रतीयमानं, इन्दौ इव– चन्द्रमसि इव, ''हिमांशुश्चन्द्रमाश्चन्द्रः इन्दुः कुमदबान्धवः'' इत्यमरः, कौमुदीकपटेन– ज्योत्स्नाव्याजेन, सुधाधारामिव– अमृतप्रवाहमिव, वर्षति–वृष्टिं कुर्वति, गगने– आकाशे, अस्मिन्नीति वार्ताम्– अस्माकं नीतिवाक्यम्, शुश्रूषुषु– श्रोतुम् इच्छसु, इव– यथा, मौनमाकलयत्सु मौनं धारयत्सु, पतङ्गकुलेषु– विहगकुलेषु, कैरवहर्षप्रकारमुखरेषु– कुमुदप्रफुल्लनमोदाविर्भावशब्दायमानेषु, चञ्चरीकेषु– भ्रमरेषु, अस्पष्टाक्षरम्– अस्फुटवर्णम्, कम्पनिःश्वासम्– वेपमाननिः श्वासम्, श्लथकण्ठम्– स्तम्भितकण्ठं, घर्घरितस्वनम्– घर्घर इति ध्वनियुतम्, चीत्कारमात्रम्– चीत्कारयुक्तम्, दीनतामयम्– कातरतासंयुक्तम्, अत्यवधान– श्रव्यत्वात्– निरन्तरश्रव्यत्वात्, अनुमितदविष्ठम्– अनुमितदूरत्वम्, क्रन्दनम्–रोदनं, अश्रौषम्– अशृण्वम् अहमित्यर्थः।

हिन्दीरूपान्तर– हे भगवन् ! यदि कौतूहल है; तो सुनिये। कल सायंकालिक कृत्यों का सम्पादन कर लेने पर, यहीं कुशासन पर मेरे बैठने पर, (मेरे) चारों ओर छात्र समूह के बैठने पर, मन्दवायु के स्पर्श से लताओं के धीरे–धीरे कम्पित होने पर, रात्रिरूपी नायिका के चन्दनबिन्दु (तिलक) के समान चन्द्रमा के उदित होने पर, आकाश की कौमुदी के व्याज से अमृतधारा बरसाने पर, हमारी नीति सम्बन्धी वार्ता को मानों सुनने की इच्छा से पक्षियों के समूह के मौन धारण करने पर, कुमुदों के खिलने के द्वारा अभिव्यक्त हर्ष के द्वारा, भ्रमरों के मुखरित होने पर, अव्यक्त अक्षरों वाला, काँपती हुई श्वासवाला, अवरुद्ध कण्ठवाला, घर्घरध्वनि से युक्त, चीत्कारमात्र, कातरतापूर्ण, अत्यन्तध्यान देने पर सुनाई पड़ने के कारण बहुत दूर होने का अनुमान कराने वाला क्रन्दन सुनाई पड़ा।

विशेष– 1. इस गद्यांश में 'समुदिते' से 'पतङ्गकुलेषु' तक प्रयुक्त 'इव' निपात उत्प्रेक्षावाचक है। यहाँ चन्द्रमा में चन्दन बिन्दु की, आकाश से अमृतवर्षा की और पक्षियों में नीतिवार्ता सुनने की सम्भावना की गयी है। एवं 'या

मिनीकामिनी में रात्रि पर कान्तात्व का आरोप होने से रूपकालङ्कार है। जिसका लक्षण है– रूपकं रूपिता रोपो विषये निरपह्नवे।' (शा0)

2. इस ग्रन्थ की प्रारम्भिक पङ्क्तियों में 'शान्तरस' और अन्तिम में करुण रस है।

शिवराजविजयः– अस्मिन् गद्यखण्डे व्यासमहोदयेन – यावन त्रासेन भीतायाः कन्याकायाः स्वाभाविक वर्णनं कृतवान्। तत्क्षणमेव च '' कुत इदम् ? किमिदमिति दृश्यतां ज्ञायताम्'' इत्यादिश्य छत्रेषु विसृष्ठेषु, क्षणानन्तरं छात्रेणैकेन भयभीता सवेगमत्युष्णं दीर्घं निःश्वसती, मृगीव व्याघ्राऽऽघ्राता, अश्रुप्रवाहैः स्नाता, सवेपथुः कन्यकैका अङ्के निधाय समानीता। चिरान्वेषणेनापि च तस्याः सहचरी सहचरो वा न प्राप्तः। तां च चन्द्रकलयेव निर्मिताम्, नवनीतेनेव रचिताम्, मृणालगौरीम्, कुन्दकोरकाग्रदतीं सक्षोभं रुदतीम् अवलोक्यास्माभिरपि न पारितं निरोद्धुम् नयनवाष्पाणि।

संस्कृत व्याख्या– तत्क्षणमेव तत्कालमेव, च–पुनः, कुतः– कस्मात् स्थानात्, इदम्– रोदनम् किमिदम्– किं कारणं चास्य ध्वनेः, इति– एवम्प्रकारेण, दृश्यताम्– अवलोक्यताम्, ज्ञायताम्– अवगम्यताम्, इति– इत्थम्, आदिश्य– आज्ञां कृत्वा, छात्रेषु– शिष्येषु, विसृष्टेषु– प्रेषितेषु, क्षणानन्तरम्– निमेषानन्तरम्, छात्रेणैकेन– एकेन शिष्येन, भयभीता– भयाक्रान्ता, ''वरस्त्रासो भीतिर्भीः साध्वसं भयम्' इत्यमरः। सवेगम्– वेगयुक्तम्, अत्युष्णं– बहुसन्तप्तम्, दीर्घम्– आयततरम्, निःश्वसती– श्वासग्रहणं कुर्वती, मृगीव– हरिणीव, व्याघ्राऽऽघ्राता–व्याघ्राक्रान्ता, अश्रुप्रवाहैः– नेत्रवाष्पैः, स्नाता– विहितस्नाता, सवेपथुः– कम्पसहित, कन्यकैका–एका बाला, अङ्के–कोडे, ''उत्सङ्गचिह्नयो रङ्कः'' निधाय–संस्थाप्य, समानीता–आनीता। चिरान्वेषणेनापि– अत्यधिक गवेषणेनापि, च–पुनः, तस्याः– प्राप्तकन्यकायाः, सहचरी–सखी, सहचरो सखा वा, न प्राप्तः न मिलितवान्, ताम्, रोदनात् क्लिन्ना बालिकाम् च चन्द्रकलयेव– हिमांशुलेखया इव, निर्मिताम्, विरचिताम्, नवनीतेनेव– हैयङ्गवीनेनेव, रचिताम्–

कृताम्, मृणालगौरीम्– कमलदण्ड इवधवलाम्, कुन्दकोरकाग्रदतीम्, कुन्दकलिकेव अग्रदशनाम, सक्षोभं– ससाध्वसम्, रुदतीम्,– विलपन्तीम्, अवलोक्य दृष्ट्वा, अस्माभिरपि– आश्रमनिवासिभिरिपि, मादृशैरित्यर्थः, न–नहि– पारितुम्– शक्तम्, निरोद्धुं– अवरोद्धुम्– नयनवाष्पाणि– नेत्राश्रूणि। चास्रु नेत्राम्बु रोदनं चास्रमश्रु वाष्पमुष्मासः इत्यमरः।

हिन्दीरूपान्तर– और उसी क्षण ''यह रोने का शब्द कहाँ से आ रहा है ? यह किस कारण से है? देखो? ज्ञात करो।'' ऐसा आदेश देकर छात्रों को भेजने पर, एक क्षण के पश्चात् एक छात्र–भयभीत, कम्पनयुक्त, अत्यन्त उष्ण और दीर्घ निःश्वास लेती हुई, मानों व्याघ्र से सूँघी हुई, आँसुओं से नहाई हुई, कम्पनयुक्त, एक बालिका को गोद में लेकर आया। बहुत खोजने पर भी उसका कोई सहचर या सहचरी प्राप्त नहीं हुई। चन्द्रकला से निर्मित सी और नवनीत से विरचित जैसी (सुकोमल), कमलनाल की भाँति धवलवर्ण, कुन्द की कली जैसे आगे के दाँतों वाली, डरी हुई और रोती हुई उस (बालिका) को देखकर हम लोग भी अपने नेत्रों के आसुओं को रोकने में समर्थ नहीं हुए।

शिवराजविजय– अथ ''कन्यके! मा भैषीः, पुत्रि ! त्वां मातुः समीपे प्रापयिष्यामः, दुहितः! खेदं मा वह, भगवति! भुङ्क्ष्व किञ्चित् पिब पयः, एते तव भ्रातरः, यत् कथयिष्यसि तदेव करिष्यामः, मा स्म रोदनैः प्राणान् संशयपदवीमारोपय, मा स्म कोमलमिदं शरीरं शोकज्वालावलीढं कार्षीः इति सहस्त्रधा बोधनेन कथमपि सम्बुद्धा किञ्चित् दुग्धं पीतवती। ततश्च मया क्रोडे उपवेश्य, ''बालिके! कथय क्व पितरौ? कथमेतस्मिन्प्रान्ते समायाता? किं ते कष्टम् ? कथमरोदीः? किं वाञ्छसि? किं कुर्मः? '' इति पृष्टा मुग्धतया अपरिकलित– वाक् पाटवा, भयेन विशिथिलवचनविन्यासा, लज्जया अतिमन्दस्वरा, शोकेन रुद्धकण्ठा चकितचकिते कथं कथमपि अबोधयदस्मान्, यद्– एषा अस्मिन्नेदीयस्येन ग्रामे वसतः कस्यापि ब्राह्मणस्य तनयाऽस्ति।

संस्कृत व्याख्या– गद्यांशेऽस्मिन् व्यासमहोदयेन भीताः बालिकायाः सजीव

चित्रणं कृतवान्– अथ– बहुधा, बालिकावलोकनान्तरम्, कन्यके–बाले! मा भैषीः– मा भीता भव, पुत्रि–तनये, त्वाम् भवतीम्, मातुः– जनन्याः, समीपे–अन्तिके, प्रापयिष्यामः– प्रेषयिष्यामः,दुहितः– हे पुत्रि, खेदं– कष्टं, मा वह– मा सन्धारय, भगवति।– ऐश्वर्यशालिनि, भुङ्क्ष्व– किंचित् भक्षय, किंचित्– ईषत् पयः– दुग्धं, पिब– पानं कुरु, एते– पुरोवर्तमानाः तव– भवत्याः, भ्रातरः– बान्धवः, यत् कथयिष्यसि– यत् वक्ष्यसि, तत् एव करिष्यामः– वयं तदेव – करिष्यामः, मा स्म रोदनैः– विलापं मा कुरु, प्राणान्– असून् संशयपदवीं– सन्देहावस्थाम्, आरोपय– समारोपय, कोमलम्– सुकुमारम्, इदम् शरीरम्– एतद्देहं, शोकज्वालावलीढं– दुखाग्निपरिव्याप्तम्, मा स्म कार्षीः– मा कुरु, इति– एवम्प्रकारेण, सहस्रशः बोधेनेन– सान्त्वनाप्रदानेन, कथमपि– केनापिप्रकारेण, सम्बुद्धा– बोधिता सती, किञ्चित्– ईषत्, दुग्धं– पयः, 'दुग्धं क्षीर पयः' इत्यमरः पीतवती– पानं स्वीकृतवती, ततश्च–पयः पानान्तरम्, मया–ब्रह्मचारिगुरुणा, क्रोडे– अङ्के, उपवेश्य– संस्थाप्य, बालिके–बाले!, कथय– ब्रूहि, क्व–कुत्र, ते पितरौ– तव मातापिता च, कथम्– केन प्रकारेण, अस्मिन्– एतस्मिन्, आश्रमप्रान्ते– तपोवने, समायाता– समागता, किम्– किम्प्रकारम्, ते– तव, कष्टम्– दुःखम् कथम्– केन कारणेन, अरोदीः– त्वम् रोदनमकार्षीः, किम्वाञ्छसि–किम् इच्छसि, किं कुर्मः– वयं किं कुर्यामः, इति पृष्टा– एवं प्रकारेण पृष्टा मुग्धतया– सरलतया, अपरिकलितवाक्पाट्वा– अज्ञातभाषणचातुर्या, भयेन– भीत्या, विशिथिलवचनविन्यासा– विशिथिलभाषणाम्, लज्जया– व्रीडया, ''मन्दाक्ष ह्रीस्त्रपा व्रीडा लज्जा'' इत्यमरः। अतिमन्दस्वरा– अतिकोमलस्वरा, शोकेन–दुःखेन, रुद्धकण्ठा– स्तम्भितकण्ठाः, चकितचकितेव– अतिभीतेव, कथं कथमपि– येन केनापि प्रकारेण, अबोधयद्– अज्ञापयत्, अस्मान्– आश्रमवासिनः, यत् एषा– इयं बालिका, अस्मिन्–एतस्मिन्, नेदीयस्येव– अतिसमीपस्येव, ग्रामे वसतः– ग्रामे निवसतः कस्यापि– कस्यचिदपि, ब्राह्मणस्य– विप्रस्य, तनया–पुत्री, असि– वर्तते।

हिन्दी अनुवाद– तत्पश्चात् ''हे पुत्री' डरो मत, हे बेटी! हम (हम) तुम्हें तुम्हारी माता के पास पहुँचा देंगे। हे बेटी दुखी मत हो, हे देवी! कुछ खाओ, दूध पियो, ये तुम्हारे भाई हैं, जो कहोगी (हम) वही करेंगे, रोदन करके अपने प्राणों को संशय में मत डालो, इस कोमल शरीर को शोक की ज्वाला में– संतप्त मत करो'' ऐसा हजारों बार कहने पर किसी प्रकार आश्वस्त हुई इस बालिका ने थोड़ा दूध पिया। तदनन्तर मेरे द्वारा गोद में बैठाकर, हे बालिके! बताओं तुम्हारे माता–पिता कौन हैं? (हम तुम्हारे लिए) क्या करें? ऐसा पूछे जाने पर अबोध होने के कारण वाक्–चातुरी से अनभिज्ञ, भय के कारण शिथिल वाक्य विन्यासवाली, लज्जा के कारण अत्यन्त मन्द स्वरवाली, शोक से अवरुद्धकण्ठ वाली, डरी हुई सी उसने किसी प्रकार से हमे बताया कि यह इस (आश्रम) के समीपवर्ती ग्राम में रहने वाले किसी ब्राह्मण की कन्या है।

विशेष– 1. इस गद्यांश में व्यास जी ने भयग्रस्त बालिका का स्वाभाविक वर्णन किया है। अतः यहाँ स्वभावोक्ति अलङ्कार है। 'स्वभावोक्तिस्तुडिम्भादेः स्वक्रियारूप वर्णनम्' है। एवं 'शोकज्वालावलीढं' में रूपकालङ्कार है। जिसका लक्षण ''रूपकंरूपिकतारोपोविषये निरपह्वे'' है।

शिवराजविजयः– एनां च सुन्दरीमाकलय्य कोऽपि यवनतनयो नदीतटान्मातुर्हस्तादाच्छिद्य क्रन्दन्तीं नीत्वाऽपससार। ततः कञ्चिदध्वानमतिक्रम्य यादवसिधेनुकां सन्दर्थ्य विभीषिकयाऽस्याः क्रन्दनं कोलाहलं शमयितुमियेष, तावदकस्मात् कोऽपि कालकम्बल इव भल्लूको वनान्तादुपजगाम। दृष्ट्वैव यवनतनयोऽसौ तत्रैव त्यक्त्वा कन्यकामिमां शाल्मलितरुमेकमारुरोह। विप्रतनया चेयं पलाशपलाशिश्रेण्यां प्रविश्य घुणाक्षरन्यायेन इत इव समायाता यावद् भयेन पुना रोदितुमराब्धवती, तावदस्मच्छात्रेणैवानीते'' ति।

संस्कृतव्याख्या– अस्मिन् गद्यांशे व्यासमहोदयेन ब्राह्मणबालिकाया यावनत्रासेन मोक्षणं कथमभवत् इति वृत्तान्तं वर्णितवान्– एनां– पूर्ववर्णिताम् इमाम्– कन्याम्, च– पुनः, सुन्दरीम्– शोभनाङ्गीम्, आकलय्य–निश्चित्य,

कोऽपि– अज्ञातकुलशीलः, यवनतनयः– यवनपुत्रः, नदीतटात्– सरितत्टात्, ''कूलं रोधश्च तीरं प्रतीरंच तटं त्रिषु'' इत्यमरः। मातुः– जनन्याः हस्ताद्– करात्, आच्छिद्य– बलादाकृष्य, क्रन्दन्तीम्– विलपन्तीम्, नीत्वा– आदाय, अपससार– पलायितवान्, ततः– तदनन्तरम्, क्वचिदध्वानम्– ईषत्पन्थानम्, अतिक्रम्य– पारंकृत्वा, यावत्–यावत्कालपर्यन्तम्, असिधेनुकां– छुरिकाम्, ''छुरिका चासिधेनुका'' इत्यमरः। संदर्श्य– प्रदर्श्य, विभीषिकया– भीत्या, अस्याः– कुटीरस्थबालिकायाः, क्रन्दनकोलाहलम्– रोदनध्वनिम्, शमयितुं– शान्तुंकर्तुम्– इयेष– वाञ्छतिस्म, तावत्– तावद्कालमेव, अकस्मात्–सहसा, कोऽपि– कश्चिदपि कालकम्बल इव– यमकम्बल इव, भल्लूकः– एतदाख्यो जन्तुविशेषः, वनान्तात्– वनप्रान्तात्, उपाजगाम– समीपमागतवान्, दृष्टवैव– तं विलोक्यैव, असौ– सः, यवनतनयः– यवनसुतः तत्रैव– तस्मिन्नेव स्थाने, कन्यकामिमाम्– एनाम् बालिकाम्, त्यक्त्वा–परित्यज्य, शाल्मलितरुम्– शाल्मलीवृक्षम्, एकम्, आरुरोह– आरोहितवान्। विप्रतनया– ब्राह्मणकन्या च, इयम्– एषा, पलाशपलाशिश्रेण्यां– किंशुकवृक्षसरण्यां– 'पङ्क्तौ' पलाशे किंशुकः पर्णोवातपोथः इत्यमरः। प्रविश्य– प्रवेशं कृत्वा घुणाक्षरन्यायेन– काष्ठबेधकघुणाख्यकृमिन्यायेन संयोगवशेनित्यर्थः इत एव– एतदाश्रमाभिमुखमेव, समायाता– आगता, यावद् भयेन–भीत्या, पुनारोदितुम्– पुनः रोदनंकर्तुम् आरब्धवती– समारेभे, तावदेव, अस्मच्छात्रेण– अस्माकं शिष्येण, आनीता– समानीता 'इति–एतद् बालिकाप्राप्तिवृतान्तमस्ति।'

हिन्दी रूपान्तर– इस कन्या को सुन्दरी समझकर कोई यवनबालक नदी के तट से माता के हाथ से छीनकर (इस) रोती हुई बालिका को लेकर भागा। तदनन्दर कुछ दूर जाकर (उसने) ज्यों ही छुरी दिखाकर भयभीत करके उसके रोने की ध्वनि को शान्त करना चाहा, त्यों ही अचानक वनप्रान्त से काले कम्बल जैसा एक भालू निकला। उसे देखते ही वह यवनयुवक इस बालिका को वहीं छोड़कर एक सेमल के वृक्ष पर चढ़ गया। और यह बालिका

पलाशवृक्षों की पङ्क्ति में प्रवेश करके संयोगवश (घुणाक्षर न्याय से) इस (आश्रम् की) ओर आ गयी। पुनः ज्यों ही इसने भय के कारण पुनः रोना प्रारम्भ किया, त्यों ही हमारा छात्र इसे यहाँ ले आया।

विशेष – 1. इस गद्यांश के 'पलाशपलशिश्रेण्याम्' वाक्यांश में यमकालङ्कार, प्रसादगुण और वैदर्भीरीति है।

2. घुणाक्षरन्याय – जैसे काष्ठ में रहने वाला 'घुन' नामक कीडा जब लकड़ी को काटता होता है तो कुछ अक्षर या निशान बन जाता है। अकस्मात् होने वाले इस चिह्न को घुणाक्षरन्याय कहते हैं।

शिवराजविजयः– तदाकर्ण्य कोपज्वलित इव योगी प्रोवाच– ''विक्रमराज्येऽपि कथमेषु पातकमयो दुराचाराणामुपद्रवः?'' ततः स उवाच–

''महात्मन् ! क्वाधुना विक्रमराज्यम्? वीरविक्रमस्य तु भारतभुवं विरहय्य गतस्य वर्षाणां सप्तदशशतकानि व्यतीतानि। क्वाधुना मन्दिरे मन्दिरे जयजयध्वनिः? क्व सम्प्रति तीर्थे–तीर्थे घण्टानादः? क्वाद्यापि मठे मठे वेदघोष? अद्य हि वेदा विच्छिद्य वीथीषु विक्षिप्यन्ते, धर्मशास्त्राणि उद्धूय धूमध्वजेषु ध्मायन्ते, पुराणानि पिष्ट्वा पानीयेषु पात्यन्ते। भाष्याणि भ्रंशयित्वा भ्राष्टेषु भर्ज्यन्ते; ''क्वचिन्मन्दिराणि भिद्यन्ते, क्वचित् तुलसीवनानि छिद्यन्ते, क्वचिद् दारा अपह्रियन्ते, क्वचिद् धनानि लुण्ठ्यन्ते, क्वचिदार्तनादाः, क्वचिद्रुधिरधाराः, क्वचिदग्निदाहः, क्वचिद् गृहनिपातः'' इत्येव श्रूयतेऽवलोक्यते च परितः।

संस्कृत व्याख्या– अस्मिन् गद्यखण्डे व्यासमहोदयेन तत्कालिक सामाजिक राजनैतिक स्थितिम् कीदृक् अस्ति इति उक्तवान्। तत्– ब्रह्मचारिगुरुवाक्यम्, आकर्ण्य–निशम्य, कोपज्वालाज्वलितः– क्रोधाग्नि–ज्वालया–ज्वलित इव, योगी– योगसाधको महात्मा, प्रोवाच– जगाद,– विक्रमराज्येऽपि विक्रमादित्यस्य राज्येऽपि, कथमेष– किमेतादृशम्, पातकमयो– पापबहुलः, दुराचाराणां– दुर्जनानां, कथं– कस्मात्, उपद्रवः– उपप्लवः, ततः– तत्पश्चात्– सः– ब्रह्मचारिगुरुः, उवाच–जगाद्

''महात्मन्– हे योगिराज, अधुना– इदानीम्, विक्रमराज्य– विक्रमादित्यनृपतिः शासनकालः, क्व– कुत्रास्ति? वीरविक्रमस्य तु– विक्रमादित्यस्तु, भारतभुवं– भारतभूमिम्, विरहय्य– परित्यज्य, गतस्य– प्रस्थितस्य, शतकानिवर्षाणां– संवत्सराणां, सप्तदश– शतकानाम् सप्तदश, व्यतीतानि– अपगतानि। अधुना– इदानीम् तु मन्दिरे–प्रतिमन्दिरम्, जयजयध्वनिः– जयजयनादः, क्व– कुत्र? सम्प्रति– अधुना, तीर्थे–तीर्थे– प्रतितीर्थम्, घण्टानादः– घण्टाध्वनिः, क्व–कुत्र? अद्यापि– अस्मिन् दिनेऽपि, मठे–मठे–प्रतिमठं उद्घोषः श्रुतध्वनिः क्व–कुत्रास्ति अद्य–इदानीम् हि – तु वेदाः श्रुतयः विच्छिद्य–विपाट्य वीथीषु– मार्गेषु विक्षिप्यन्ते– विकीर्यन्ते, धर्मशास्त्राणि– मन्वादि प्रणीत– स्मृतिशास्त्राणि, उद्धूय– उत्तोल्य, धूमध्वजेषु– अग्निषु, ध्मायन्ते– भस्मसात् क्रियन्ते, पुराणानि– वेदव्यासादिरचित– श्रीमद्भागवतादीनि पुराणानि, पिष्ट्वा– चूर्णीकृत्य, पानीयेषु, पात्यन्ते विपात्यन्ते। भाष्याणि–सूत्रव्याख्यारूपभाष्याणि भ्रंशयित्वा–विनाश्य, भ्राष्टेषु–भूर्जनपात्रेषु भर्ज्यते– वह्निना दाह्यन्ते, क्वचित्– कुत्रचित् मन्दिराणि– देवगृहानि, भिद्यन्ते– धूलिसात् क्रियन्ते, क्वचित्– कुत्रचित्, तुलसीवनानि– तुलसीतरुकाननानि कर्त्यन्त, क्वचिद्– कुत्रचित्, दाराः– भार्याः, अपह्रियन्ते– चोर्यन्ते, क्वचित् कुत्रचित् , धनानि– सम्पदः, लुण्ठ्यन्ते– लुण्टाकैः संगृह्यन्ते, क्वचित् कुत्रचित् आर्तनादाः– करुणक्रन्दनानि, क्वचिद्– कुत्रचित्, रुधिरधाराः शोणितप्रवाहाः, क्वचित्–कुत्रचित्– अग्निदाहः– पावकदाहः, क्वचिद्– कुत्रचित्, गृहनिपातः– भवन–विनाशः ग्रहं गेहोदवसितं वेश्म सद्म निकेतनं, इत्येव– एवम्प्रकारक एव, श्रूयते– आकर्ण्यते, अवलोक्यते–दृश्यते, च– पुनः परितः सर्वतः चतुर्दिक इत्यर्थः।

हिन्दी रूपान्तर– उस (पूर्ववृत्तान्त) को सुनकर क्रोधाग्नि की ज्वाला से जलते हुए के समान योगिराज बोले– ''विक्रमादित्य के शासनकाल में भी यह पापबहुल दुराचारियों का उपद्रव कैसे (हो रहा है)?'

तदनन्तर उन (ब्रह्मचारिगुरु) ने कहा– हे महात्मन्। इस समय विक्रमादित्य का शासन कहाँ है। वीर विक्रमादित्य के राज्य को तो भारतभूमि को छोड़े हुए

सत्रह सौ वर्ष बीत गये हैं। इस समय मन्दिरों में जय जय घोष कहाँ? आज तीर्थें में घण्टा बजने की ध्वनि कहाँ ? इस समय मठों में (छात्रों के) वेदपाठ की ध्वनि कहाँ? क्योंकि इस समय तो वेद विच्छिन्न करके गलियों में फेंके जा रहे हैं; (मनुस्मृति आदि) धर्मशास्त्र उठाकर अग्नि में डाले जा रहे हैं; (धर्मसूत्रों की व्याख्यारूप) भाष्य विनष्ट करके भाड़ में भूँज जा रहे हैं; (श्रीमद्भागवत् आदि) पुराण चूर्णकरके जल में फेंके जा रहे हैं; ''कहीं मन्दिर तोड़े जा रहे हैं, कहीं तुलसी के वन (वृक्ष) काटे जा रहे हैं, कहीं स्त्रियाँ अपहृत की जा रही हैं, कहीं धन लूटे जा रहे हैं, कहीं करुणक्रन्दन है, (तो) कहीं रक्तधारा (बहाई जा रही हैं), कहीं अग्निदाह (किया जा रहा है), (तो) कहीं घर गिराये जा रहे हैं, (इस समय) चारों ओर यही सुनाई और दिखाई पड़ता हैं।

विशेष – इस गद्यखण्ड में पं. अम्बिकादत्त व्यास जी ने यवनकालीन भारत के दयनीय एवं करुणामय पापाचार बहुल वातावरण की भावपूर्ण व्यञ्जना की है।

शिवराजविजयः – तदाकर्ण्य दुःखितचकितश्च योगिराडुवाच– '' कथमेतत् ह्य एव पर्वतीयाच्छकान् विर्निजित्यं महता जयघोषेण स्वराजधानीमायातः श्रीमानादित्य– पदलाञ्छनो वीरविक्रमः। अद्यापि तद्विजयपताका मम चक्षुषोरग्रत– इव समुद्धूयन्ते, अधुनापि तेषां पटहगोमुखादीनां निनादः कर्णशष्कुलीम् पूरयतीव, तत् कथमद्य वर्षाणां सप्तदशशतकानि व्यतीतानि'' इति? ततः सर्वेषु स्तब्धेषु चकितेषु च ब्रह्मचारिगुरुणा प्रणम्य कथितम्।

संस्कृत व्याख्या– अस्मिन् गद्यांशे व्यासमहोदयेन वीरविक्रमादित्यराज्यकाले कीदृक् धर्मपूर्ण राज्यमासीति इति वर्णितवान् – तत्– ब्रह्मचारिगुरुवचनम्, आकर्ण्य– श्रुत्वा, दुःखितः–पीडितः, चकितश्च– आश्चर्ययुक्तश्च, योगिराड्– योगिश्रेष्ठ, उवाच– जगाद, कथमेतत्– एतत् एव वचनं कथं संगच्छते इति तात्पर्यम्, ह्य एव विगतदिवस एव, पर्वतीयान् – शैलसंस्थितान्, शकान्– शकजातिशासकान्, विनिर्जित्य– जित्वा, महता–

तारस्वरेणोत्थम्, जयघोषेन– जयजयेतिशब्देन, स्वराजधानीम्– स्वकीयशासनकेन्द्रभूताम् उज्जयिनीम्, आयातः– आगतः, श्रीमान्– शोभायुक्तः, आदित्यपदलाच्छनः– आदित्यपदविभूषितः, वीरविक्रमः– शूरविक्रमादित्यः। अद्यापि– इदानीमपि, तद्विजयपताका, विक्रमादित्यस्य विजयपताका, मम– योगिराजस्य चक्षुषोः– नयनयोः अग्रत इव– पुरत इव, समुद्धूयन्ते–राजन्ते, अधुनापि– इदानीमपि, तेषां– विक्रमसम्बन्धिनीम् पटहगोमुखादीनां वाद्यविशेषाणां, 'आनकः पटहोऽस्त्री' इत्यमरः निनादः– ध्वनिः, कर्णशष्कुलीम्– श्रोत्रशष्कुलीम्, पूरयतीव– विभर्ति इव, तत् कथम्, तेन केनप्रकारेण, अद्य– इदानीम्, वर्षाणां– शरदाम्, सप्तदशशतकानि, व्यतीतानि– जातानि' इति– इत्थम्, पृष्टवान्। ततः– तदनन्तरम्, सर्वेषु– निखिलेषु जनेषु, स्तब्धेषु–विशेषशांतेषु, चकितेषु– आश्चर्यीभूतेषु च, ब्रह्मचारिगुरुणा– आश्रमस्थमहर्षिणा, प्रणम्य– नमस्कृत्य, कथितम्– उक्तम्।

हिन्दी रूपान्तर– उस बात को सुनकर दुखी और चकित योगिराज बोले– ''यह कैसे? कल ही तो आदित्य पद से विभूषित वीरविक्रम पर्वतीय शकों को जीतकर महान् जयघोष के साथ अपनी राजधानी (उज्जयिनी) में आये थे। आज भी उनके विजय की पताका मेरे नेत्रों के सामने मानों लहरा रही है। इस समय भी उनके नगाड़े, तुरही आदि बाजे मेरे कर्णविवर को मानो पूरित कर रहे हैं। तो कैसे आज सत्रह सौ वर्ष व्यतीत हो गये?''

तदनन्तर सभी लोगों के स्तब्ध और चकित हो जाने पर ब्रह्मचारियों के गुरू ने (उन्हें) प्रणाम करके कहना प्रारम्भ किया।

विशेष – इस गद्यखण्ड में 'अद्यापि' से लेकर 'पूरयतीव' तक उत्प्रेक्षा अलङ्कार है जिसका लक्षण 'सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्' किया जाता है।

शिवराजविजयः– ''भगवन्! बद्धसिंहासनैर्निरुद्धनिःश्वासैः प्रबोधितकुण्डलनीकैः विजितदशेन्द्रियैरनाहतनादतन्तुमवलम्बयाऽऽज्ञाचक्रं संस्पृश्च

चक्रमण्डलं भित्त्वा, तेजः पुञ्जमविगणय्य, सहस्त्रदलकमलस्यान्तः प्रविश्य, परमात्मानं साक्षात्कृत्य, तत्रैव रममाणैर्मृत्युञ्जयैरानन्दमात्रस्वरूपैर्ध्यानावस्थितैर्भवा दृशैर्न ज्ञायते कालवेगः। तस्मिन् समये भवता ये गुरुणा अवलोकिताः तेषां पञ्चाशत्तमोऽपि पुरुषो नावलोक्यते। अद्य न तानि स्रोतांसि नदीनाम्, न संस्था नगराणाम्, न सा आकृतिर्गिरीणाम्, न सा सान्द्रता विपिनानाम् किमधिकं कथयामि भारतवर्षमधुना अन्यादृशमेव सम्पन्नमस्ति''।

संस्कृतव्याख्या – अस्मिन् गद्याशे व्यासमहोदयेन योगिराजस्य विशेषतां वर्णयन् योगसमाधेः सोपानं वर्णयन्तः भारतस्य दुर्दशामुक्तवान् – भगवन्– हे देव, बद्धसिंहासनैः– गृहीतासनविशेषैः, निरुद्धनिःश्वासैः– प्राणायामेनावरुद्धश्वसनैः, प्रबोधितकुण्डलनीकैः– समुद्योतितकुण्डलिनीकैः, विजितदशेन्द्रियैः–वशीकृत्वगादिदशेन्द्रियैः, अनाहतनादतन्तुम्, सुषुम्नामध्यस्थ तुरीयपदद्मोत्थम् समाधौ अनुभूतध्वनिम्, अवलम्बय– समाश्रित्य, आज्ञाचक्रं– भ्रूमध्यस्थ– द्विदलात्मकचक्रम् चक्रमण्डलं–चन्द्रबिम्बं, भित्त्वा–विभिद्य षोडषदलात्मकं चक्रं भित्त्वा, इत्यर्थः; तेजः पुञ्जम्– सोमचक्रे स्थितं महाप्रकाशम् अविगण्य्यतिरस्कृत्य, सहस्त्रदलकमलस्य– ब्रह्मरन्ध्रवर्ति– सहस्त्रारचक्रस्य, अन्तः प्रविश्य– अभ्यन्तरं प्रवेशंकृत्वा, परमात्मानम्– परं ब्रह्म, साक्षात्कृत्य–साक्षात् अनुभवं दर्शनं वा कृत्वा, तत्रैव– परब्रह्मणि, रममाणैः– विहरणशीलैः मृत्युञ्जयैः– स्वाधीनीकृत्यकालवृत्तिभिः, आनन्दमात्रस्वरूपैः– सच्चिदानन्दस्वरूपैः अर्थात् ब्रह्मरूपैः, ध्यानावस्थितैः– आबद्धध्यानैः, भवादृशैः– योगिवर्यत्वत्सदृशैः,न ज्ञायते– नावबुध्यते, कालवेगः– समयचक्रः। तस्मिन्न समये– तस्मिन् काले, भवता– श्रीमता, योगिराजेन, ये पुरुषा– ये जनाः, अवलोकिताः–विलोकिताः, तेषां– अवलोकितानां– नावलोक्यते–न दृश्यते– अधुना–इदानीम्। अद्य– सम्प्रति, न–नहि, तानि–भवता दृष्टानि, स्रोतांसि– धाराः, नदीनाम्– सरिताम्, न–नहि, सा– पुरावर्तिनी प्रसिद्धा, संस्थाः– स्थितिः, नगराणां– जनपदानां, नहि, सा– पुरावर्तिनी आकृतिः– स्वरूपः, गिरीणाम्– पर्वतानां, न– नहि, सा– पुरावलोकिता, सान्द्रता– गहनता,

विपिनानाम्– वनानाम्, 'अटव्यरण्यं विपिनं गहनम् काननं वनम्' इत्यमरः किमधिकम्– कथमधिकम्, कथयामः वर्णयामः, अधुना– इदानीम्, एतर्हि सम्प्रदानीम्' भारतवर्षम्– भारताख्यो देशः, अन्यादृशमेव– पर्वतः भिन्नमेव, सम्पन्नमस्ति–जातम् वर्तते।

हिन्दी रूपान्तर– हे भगवन् सिद्धासन लगाकर, श्वास को (प्राणायाम द्वारा) अवरुद्ध करके, कुण्डलिनी को जाग्रत करके, अनाहत नाद के सूत्र का अवलम्बन करके, आज्ञाचक्र का संस्पर्श करके (योग के) महाप्रकाश को तिरस्कृत करते हुए, सहस्त्रदल कमल के मध्य प्रविष्ट होकर, परमात्मा का साक्षात्कार करके, उस परब्रह्म में ही रमण करने वाले, मृत्युञ्जय, आनन्दमात्र स्वरूप वाले, ध्यानावस्थित आप जैसे लोगों के द्वारा जो पुरुष उस समय देखे गये थे; उनमें से पचासवाँ पुरुष (व्यक्ति) भी इस समय नहीं दिखाई पड़ता। आज न नदियों की वे धारायें हैं; न नगरों की वह स्थिति है। न वनों की गहनता है, अधिक क्या कहें; इस समय भारतवर्ष अन्य प्रकार का सा हो रहा है।

विशेष– इस गद्यांश में गौडीरीति का प्रयोग हुआ है – 'गौडीडम्बरबद्धास्याद्'। तथापि शब्दयोजना और भावात्मकता दोनों दृष्टि से भाषा में प्रवाह है। यहाँ अनेक यौगिक आसनों का उल्लेख भी है।

शिवराजविजय– इदमाकर्ण्य किञ्चित् स्मित्वेव परितोऽवलोक्य च योगी जगाद– '' सत्यं न मया लक्षितो समयवेगः। यौधिष्ठिरे समये कलितसमाधिरहं वैक्रमसमये उदस्थाम्। पुनश्च वैक्रमसमये समाधिमाकलय्य समाधिमेव कलयिष्यामि, किन्तु तावत् संक्षिप्य कथ्यतां का दशा भारतर्षस्येति–''

संस्कृतव्याख्या– अस्मिन् गद्यांशे व्यासमहोदयेन भारतवर्षस्य दशा ज्ञातुं योगिराजस्य कुतूहलं चित्रितवान् – इदमाकर्ण्य– ब्रह्मचारिगुरोरेतत् वचनं श्रुत्वा किञ्चित्– मनाक्, स्मित्वा– स्मितं कृत्वा इव, परितः– सर्वतः, अवलोक्य– दृष्टवा च, योगी– योगिराज, जगाद–उवाच, सत्यम्– अवितथाम्, न लक्षितो– न दृष्टो, मया– समाधिस्थेन योगिना, समयवेगः कालप्रवाहः। यौधिष्ठरे–

युधिष्ठिरसम्बद्धे, समये– काले, कलितसमाधिः– धारितसमाधिः, अहं– योगसाधकोऽहं, वैक्रमसमये– विक्रमादित्यकाले, उदस्थाम्– समाधितः विरतोऽभूवम्। पुनश्च– भूयश्च, वैक्रमसमये– विक्रमादित्यकाले, उदस्थाम्– समाधितः विरतोऽभूवम्। पुनश्च– भूयश्च, वैक्रमसमये– विक्रमादित्यकाले, समाधिं, योगदशां ध्यानं वा, आकलय्य– समालम्ब्य, अस्मिन्– एतस्मिन्, दुराचारमये– दुष्टाचारयुक्ते, समये– काले, अहं– योगी, उत्थितः– समाधिं त्यक्त्वा स्थितोऽस्मि। अहं– योगिराट्, पुनः– भूयो, गत्वा– गमनं कृत्वा, समाधिमेव– ध्यानमेव, कलयिष्यामि– करिष्यामि सन्धारयिष्यामि वा, किन्तु– परन्तु, तावत्– तावत्कालपर्यन्तम्, संक्षिप्य समासेन अनतिविस्तरेणेति भावः, कथ्यताम् उच्यताम् भारतवर्षस्य,– भारतदेशस्य इदानीं का दशा– का अवस्थाऽस्ति।

हिन्दी रूपान्तर– यह सुनकर कुछ मुस्कुराते हुए से चारों ओर देखकर योगिराज बोले यह सत्य है कि मुझे काल के वेग का अनुभव नहीं हुआ। युधिष्ठिर के समय में समाधि लगाकर मैं विक्रमादित्य के समय में उठा। विक्रमादित्य के समय में पुनः समाधि लगाकर इस दुराचारपूर्ण समय में उठा हूँ। मैं पुनः जाकर समाधि ही लगाऊँगा, किन्तु तब तक संक्षेप में बताइये; कि भारतवर्ष की इस समय क्या दशा है?

विशेष – इस गद्यांश में योगिराज की अन्तः प्रकृति का निरूपण एवं राष्ट्रप्रेम का चित्रण हुआ है।

शिवराजविजयः– तत् संश्रुत्य भारतवर्षीयदशासंस्मरण संजातशोको हृदयस्थप्रसादसम्भारोद्गिरणश्रमेणेवातिमन्थरेण स्वरेण ''मा स्म धर्मध्वंसनघोषणैर्योगिराजस्य धैर्यमवधीरय'' इति कण्ठं रुन्धन्तो वाष्पानविगणय्य नेत्रे प्रमृज्य, उष्णं निःश्वस्य कातराभ्यामिव नयनाभ्यां परितोऽवलोक्य ब्रह्मचारिगुरुः प्रवक्तुमारभत्– '' भगवन् दम्भोलघटितेयं रसना, या दारुणदानवोदन्तोदीरणैर्नदीर्य्यते, लोहसारमयम् हृदयम्, यत् संस्मृत्य यावनान् परस्सहस्त्रान् दुराचारान् शतधा न भिद्यते, भस्मसाच्च न भवति। धिगस्मान्,

येऽद्यापि जीवामः, विचरामः, आत्मन आर्यवंश्याश्चाभिमन्यामहे।

संस्कृतव्याख्या– अस्मिन् गद्यखण्डे ब्रह्मचारिगुरोः आत्मग्लानिम् वर्णितः व्यासमहोदयेन–तत्– योगिराजवचनम्, संश्रुत्य– श्रुत्वा, भारतवर्षीय– दशासंस्मरणसंजातशोकः– भारतदेशीयानां दशां– अवस्थां संस्मरणेन संजातः– समुत्पन्नः शोकः करुणा, हृदयस्थ प्रसादसम्भारोद्गिरण श्रमेण, हृदयस्थेन– मानसस्थप्रसादस्य– प्रसन्नातायाः, सम्भारेण– आधिक्यस्य उद्गिरणे– प्रकाशने यः श्रमः खेदः तेन इव, अतिमन्थरेण– अत्यन्त मन्देन, स्वरेण ध्वनिना, धर्मध्वंसन– घोषणैः– श्रुतिप्रतिपाद्यधर्मोन्मूलनकथनैः योगिराजस्य– योगिश्रेष्ठस्य धैर्यं, धीरताम्, मा स्म, अवधीरय– न हि विनाशय, इति– एवं प्रकारेण कण्ठमवरुन्धतः, वाष्पान्– अश्रुबिन्दुसमूहान्, अविगणय्य– नहि गणयित्वा, नेत्रे– नयने प्रमृज्य– स्वच्छतां विधाय, उष्णं– निदाघयुतम्, निःश्वस्य–निःश्वासं विधाय, कातराभ्यामिव– सकरुणाभ्यामिव, नयनाभ्यां– लोचनाभ्यां, परितः– सर्वतः, अवलोक्य–वीक्ष्य, ब्रह्मचारिगुरुः– गौरश्यामबटुशिक्षकः, प्रवक्तुं– कथयितुम्, आरभत– प्रारभत। भगवन् – श्रीमन् महर्षे! इयं– एषा, रसना– जिह्वा, दम्भोलिघटिता– वज्रनिर्मिता; या– रसना, 'रसज्ञा रसना जिह्वा' इत्यमरः दारुणदानवोदन्तोदीरणैः– निष्ठुरदानवानां वृतान्तस्य कथनैः, 'वार्ता प्रवृत्तिर्वृत्तान्तः स्यात्' इत्यमरः न– नहि, दीर्यते– भिद्यते, हृदयम्– मानसम् अन्तः करणं वा लोहसारमयम्– कृष्णायसरचितम्, यत्– यतोहि, चेतः, संस्मृत्य– स्मृत्वा, यावनान्– यवनविहितान्, परस्सहस्त्रान्– दुराचारसहस्त्रान्, शतधा– शतखण्डेषु, न– नहि, भिद्यते– विदीर्यते। भस्मासाच्च–अग्निसाच्च, न भवति– न संजायते। धिगस्मान्– मादृशां धिक्कारं विद्यते, ये– वयम्, अद्यापि– इदानीमपि, जीवामः– जीवनं धारयामः, श्वसिमः– श्वासं गृह्णामः, विचरामः– विचरणं कुर्यामः, आत्मनः– स्वस्य, आर्य्यवंश्याश्च– आर्यवंशोद्भवाश्च, अभिमन्यामहे– अङ्गीकुर्मः।

हिन्दीरूपान्तर– उस (वृत्तान्त) को सुनकर भारतवर्ष के निवासियों की दशा के स्मरण से समुत्पन्न शोकवाले, मानों हृदयस्थ प्रसन्नता को व्यक्त करने

के श्रम के कारण ऐसा कहने पर मन्दस्वर से ''धर्म के विध्वंस की कथाओं से योगिराज के धैर्य को मत नष्ट करो''– इसप्रकार कण्ठ को अवरुद्ध करने वाले आँसुओं की परवाह न करते हुए, नेत्रों को पोंछ करके, गर्म निःश्वास लेकर दीनतापूर्ण नेत्रों से चारों ओर देखकर ब्रह्मचारिगुरु ने कहना प्रारम्भ किया–

हे भगवन् यह जिह्वा वज्र की बनी हुई है, जो राक्षसों के वृत्तान्त को सुनने से विदीर्ण नहीं हो जाती। हृदय लोहे का बना हुआ है, जो यवनों के दुराचारों का स्मरण करके सैकड़ों खण्डों में छिन्न–भिन्न नहीं होता और जल कर खाक नहीं होता। हमें धिक्कार है, जो आज भी जीवन धारण किये हुए हैं श्वास लेते हैं, विचरण करते हैं और अपने को आर्यवंशी कहते हैं।

विशेष – इस गद्यांश के 'हृदसस्थप्रसाद0' वाक्यांश में उत्प्रेक्षा, 'कातराभ्यामिव' में उपमा और 'येऽद्यापि से अभिमन्यमहे पर्यन्त दीपक अलङ्कार है।

बोधप्रश्न

1. सोमनाथ मंदिर पर किस यवनशासक ने आक्रमण किया था?
2. भारत में यवनराज्य का संस्थापक कौन था ?
3. महमूद गजनवी ने सोमनाथ मंदिर पर कितनी बार आक्रमण किया था ?
4. अफजलखाँ किस राज्य का सेनापति था ?
5. योगिराज में किसके काल में समाधि लगाई थी?

इकाई – 10

संस्कृत वाक्यांश का हिन्दी में अनुवाद एवं संस्कृत व्याख्या करो

'उपक्रममुपाकर्ण्य' से **'स्वकुटीरं प्रविवेश'** तक

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 संस्कृत गद्यांश का हिन्दी में अनुवाद एवं संस्कृत व्याख्या

10.4 बोधप्रश्न

10.1 प्रस्तावना

आधुनिक संस्कृत गद्य साहित्य के सामान्य परिचय एवं पं. अम्बिकादत्त व्यास के व्यक्तित्व और कृतित्व के परिचय के पश्चात् इकाई 9 में 'विष्णोर्भगवतीमाया' से 'आर्यवंश्याभिमन्यामहे वयम्' गद्यखण्ड पर्यन्त अंश का हिन्दी अनुवाद एवं संस्कृत व्याख्या प्रस्तुत की गई थी। इकाई–10 से सम्बन्धित गद्यखण्ड 'उपक्रममुपाकर्ण्य0' से 'स्वकुटीरं प्रविवेश' तक की व्याख्या एवं हिन्दी अनुवाद इस इकाई में किया जायेगा, विद्यार्थियों को संस्कृत व्याख्या एवं संस्कृत से हिन्दी अनुवाद के ज्ञान हेतु इस इकाई का अध्ययन अपेक्षित है।

10.2 उद्देश्य

1. इस इकाई के अध्ययन से विद्यार्थी संस्कृत में अनुवाद करना सीखेंगे।

2. संस्कृत व्याख्या ज्ञान से उनके शब्दकोश में वृद्धि होगी।

3. छात्र समासविग्रह एवं उसके अर्थ को जान सकेंगे।

4. छात्र इस खण्ड के गद्यांशों के अध्ययन से अलङ्कारों एवं उसके उदाहरणों को जान सकेंगे।

5. छात्रों को ऐतिहासिक घटनाओं एवं उसके कालक्रम को आसानी से जानने में सहायता मिलेगी।

'उपक्रममुपाकर्ण्य' से 'स्वकुटीरं प्रविवेश' तक

शिवराजविजयः– उपक्रममुपाकर्ण्य अवलोक्य च मुनेर्विमनायमानं हरिद्राद्रवक्षालितमिव वदनम् निपतद्वारिबिन्दुनी नयने, अञ्चितरोमकञ्चुकं शरीरम्, कम्पमानमधरम्, भज्यमानञ्च स्वरम्, अवागच्छत् ''सकलानर्थमयः, सकलवञ्चनामयः, सकलपापमयः, सकलोपद्रवमयश्चायं वृत्तान्तः'' इति, अतएव तत्स्मरणमात्रेणापि खिद्यते एष हृदयः, तन्नाहमेनं निरर्थं जिग्लापयिष्यामि,न वा चिरवेदयिषामि'' इति च विचिन्त्य–

''मुने विलक्षणोऽयं भगवान् सकलकलाकलापकलनः सकलकालनः करालः। स एव कदाचित्पयः पूरपूरितान्यकूपारतलानि मरुकरोति। सिंहव्याघ्रभल्लूक– गण्डकफेरुशशसहस्र– व्याप्तान्यरण्यानि जनपदीकरोति, मन्दिरप्रासादाहर्म्य शृङ्गाटकचत्वरोद्यानतडागगोष्ठमयानि नगराणि च काननीकरोति। निरीक्ष्यताम् कदाचिदस्मिन्नेव भारतवर्षे यायजूकैः राजसूयादियज्ञा व्ययाजिषत, कदाचिदिहैव वर्षातपहिमसहानि तपांसि अतापिषत। सम्प्रति तु म्लेच्छैर्गावो हन्यन्ते, वेदाः विदीर्यन्त, स्मृतयः सम्मृद्यन्ते, मन्दिराणि मन्दुरीक्रियन्ते, सत्यः पात्यन्ते, सन्तश्च सन्ताप्यन्ते सर्वमेतन्माहात्म्यं तस्यैव महाकालस्येति कथं धीरधौरेयोऽपि धैर्यं विधुरयसि? शान्तिमाकलय्यातिसंक्षेपेण कथम् यवनराजवृत्तान्तम्। न जाने किमित्यनावश्यकमपि शुश्रुषते मे हृदयम्'' इति कथयित्वा तूष्णीमवतस्थे।

संस्कृतव्याख्या– अस्मिन् गद्यांशे व्यासमहोदयेन भारतवर्षस्य स्थितिम् वर्णितवान्– अमुम्–इमम् पूर्ववर्णितम्, उपक्रमं– उपोद्घातम् प्रसङ्गं वा आकर्ण्य–

श्रुत्वा, अवलोक्य– दृष्ट्वा च, मुनेः– तपस्विनः, विमनायमानस,– दुर्मनायमानम्, हरिद्राद्रवक्षालितमिव– महारजनद्रवधौतमिव, वदनं–मुखम्, निपततद्वारिबिन्दुनी– प्रच्यवद् अश्रुकणे, नयने– नेत्रे, अञ्चितरोमकञ्चुकं– रोमाञ्चयुक्तम्, शरीरं– वपुः कम्पमानमधरम्– स्फुरदधरम्, भज्यमानञ्च स्वरम्–त्रुट्यमानं च स्वरम्, अवागच्छत्– अवगतवान्, सकलानर्थमयः– सकलानर्थयुक्तः सकलवञ्चनामयः– अशेषवञ्चनान्वितः, सकलपापमयः– निखिलपापयुक्तः सकलोपद्रवमयश्च– समस्तोपप्लवयुक्तश्च अयंवृत्तान्तः– एष उदन्तः इति; अतएव– अस्मात् कारणात्, तत्स्मरणमात्रेणैव– तस्य स्मरणेनैव, एषः– अयम्, हृदयम्– मानसः, खिद्यते– कष्टमनुभवति, तत्–ततः हेतोः, अहम्– ब्रह्मचारिगुरुः, एनम्– मुनिम्, निरर्थं– निष्कारणम्, न जिग्लापयिष्यामि– ग्लापयितुं नाभिलषामि, न वा चिखेदयिष्यामि– खेदयितुम् इच्छामि, इति च एवम्प्रकारेण च विचिन्त्य– विचार्यं योगिराडुवाच–

''मुने! ब्रह्मचारिगुरो, अयं–एष, भगवान्– ऐश्वर्ययुक्तः, सकलकलाकलापकलनः– सकलानां कलानां कलापस्य समूहस्य, कलनः– निर्माता, करालः–भयङ्करः, कालः– महाकालः स एव– तादृशा एव–महाकाल एव, कदाचित्– कस्मिंश्चित् काले, पयः पूरपूरितनि– वारिप्रवाहभरितानि, अकूपारतलानि– समुद्रतलानि, मरुकरोति, मरुतुल्यं करोति, सिंहव्याघ्रभल्लूकगण्डक फेरुशसहस्त्रव्याप्तानि– मृगेन्द्रव्याघ्र–भल्लूकखड्गीशृगालशतसहस्त्राभिव्याप्तानि, अरण्यानि–काननानि, जनपदीकरोति– नगरीकरोति। मन्दिरप्रासदहर्म्यश्रृङ्गाटक– चत्वरोद्यानतडागगोष्ठमयानि– देवालयराजप्रासादधनिकावासचतुष्पथाङ्नगोस्थानक प्रचुराणि, नगराणि– पुराणि च, काननीकरोति, विपिनमिव करोति। निरीक्ष्यताम्– अवलोक्यताम्, कदाचित्–कस्मिंश्चित् काले, अस्मन्नेव–एतस्मिन्नेव, भारतवर्षे–भारताख्ये देशे, यायजूकैः– यज्ञशीलैः, यज्ञशीलैः, राजसूयादियज्ञा– राजसूयप्रभृतिविविधयागाः, व्ययाजिषत– कृताः। कदाचित्– कस्मिंश्चित्काले, इहैव–अस्मिन्नेव भारतदेशे, वर्षातपहिमवहानि– प्रावृट्वायुग्रीष्मशीतसहानि, तपानि–

कृच्छचान्द्रायणादीनि कर्माणि, अतापिषत– तप्तानि। सम्प्रति तु– इदानीन्तु, म्लेच्छैः– यवनैः, गावः– धेनवः, हन्यते– प्राणैः वियुज्यन्ते। वेदाः– श्रुतयः, विदीर्यन्ते–विच्छिद्यन्ते। स्मृतयः– मन्वादिप्रणीतानि धर्मशास्त्राणि, समृद्यन्ते– सम्मर्दनम् विधीयते। मन्दिराणि– देवगृहानि, मन्दुरीक्रियन्ते– वाजिशाली क्रियन्ते। सत्यः– पतिव्रतधर्मधारिणीस्त्रियः, पात्यन्ते, – पातिव्रत्याद् व्यभिचार्यन्ते। सन्तश्च– सज्जनाश्च, पूर्ववर्णितम् सन्तप्यन्ते– सम्पीड्यन्ते। एतत् सर्वं इदम् निखिलम्, तस्यैवम्–कारणेन, धीरधीरेयोऽपि– धैर्यधुरन्धरोऽपि, धैर्यम्– धीरत्वम्, विधुरयासि–परित्यजसि, शान्तिमालकय्य–शान्तिम् समाश्रित्य, अतिसंक्षेपेण– अतिसमासेन, कथय–वद, यवनराज्यवृत्तान्तम्, यवनशासककथानकम्। नहि जाने– नहि जानामि, किमिति– कथम्, अनावश्यकमपि–निरर्थकमपि, शुश्रुषते– श्रोतुमिच्छति, मम् हृदयम्– मदीयम् चित्तम्, इति– एवम्प्रकारेण, कथयित्वा– उक्त्वा, तूष्णीम्– मौनम्, उपतस्थे बभूव।

हिन्दी अनुवाद– ' इस पूर्व वृत्तान्त को सुनकर और मुनि के हल्दी के रंग से धुले हुए से उदास मुख को, बहते अश्रुजल बिन्दुओं से युक्त नेत्रों को, रोमाञ्चित शरीर को, काँपते हुए अधरों को टूटते हुए स्वर (शब्दों) को देखकर (योगिराज) ''समस्त अनर्थों से युक्त, समग्र वञ्चनाओं (ठग विद्याओं) से युक्त, समस्त पाप कर्मो से युक्त, सभी उपद्रवों से युक्त यह समाचार है,''अतएव उसके स्मरणमात्र से यह (मुनि) मन में खिन्न हो रहा है, इसलिए मैं इसको व्यर्थ में (इसको) ग्लानियुक्त नहीं करूँगा अथवा अधिक खिन्न (दुखी) नहीं करूँगा– ऐसा विचार करके (कहना प्रारम्भ किया)– हे मुनिश्रेष्ठ समस्त कलासमूह के रचयिता, सबको कालग्रस्त करने वाला यह भीषण काल है। वह (काल) ही कभी जल के प्रवाह से पूर्णसमुद्र को मरुस्थल बना देता है। हजारों सिंहों, व्याघ्र, भालू, गैडों, शृगालों और खरगोशों से व्याप्त जंगलों को नगर बना देता है, (कभी) मन्दिरों, महलों, अन्तः पुरों, चौराहों, प्राङ्गणों उद्यानों, तालाबों तथा गोशालाओं से युक्त नगरों को जंगल बना देता है। देखिए– कभी इसी

भारतवर्ष में याज्ञिक राजसूय आदि यज्ञ करते थे। कभी इसी (भारतवर्ष) में वर्षा, आँधी, धूप और शीत को सहने वाले तप किये जाते थे; जबकि इस समय यवनों द्वारा गायें मारी जा रही हैं, वेद फाड़े जा रहे हैं, स्मृतियाँ कुचली जा रही हैं, मन्दिर घुड़साल बनाये जा रहे हैं, सती स्त्रियाँ पतित की जा रही हैं और सज्जन संतप्त (पीड़ित) किये जा रहे हैं, यह सब उसी महाकाल का प्रताप है, अतः धैर्यशालियों में अग्रणी होने पर भी धैर्य का त्याग क्यों कर रहे हो? शान्ति धारण करके अत्यन्त संक्षेप में यवन शासन के समाचार को बताओ। मैं नहीं जानता कि अनावश्यक होने पर भी मेरा हृदय क्यों इस (वृत्तान्त) को सुनना चाहता है– ऐसा कहकर (योगिराज) मौन हो गये।

विशेष– इस गद्यांश में तत्कालीन स्थिति का एवं योगिराज की अन्तः प्रकृति का सुन्दर चित्रण किया गया है।

शिवराजविजयः– ''अथ स मुनिः– ''भगवन् धैर्येण, प्रसादेन, प्रतापेन, तेजसा, वीर्येण, विक्रमेण, शान्त्या, श्रिया, सौख्येन, धर्मेण, विद्यया च सममेव परलोकं सनाथवति तत्रभवति वीरविक्रमादित्ये शनैःशनैः पारस्परिकविरोध– विशिथिलीकृत स्नेहबन्धनेषु राजसु, भामिनीभ्रूभङ्गभूरिभावप्रभावपराभूत वैभवेषु भटेषु, स्वार्थचिन्तासन्तानवितानैकतानेष्वमात्यवर्गेषु, प्रशंसामात्रप्रियेषु प्रभुषु, ''इन्द्रस्त्वं वरुणस्त्वं, कुबेरस्त्वम् '' इति वर्णनामात्रासक्तेषु, बुधजनेषु कश्चन गजिनीस्थाननिवासी, महामदो यवनः ससेनः प्राविशत् भारतवर्षे, स च प्रजां विलुण्ठ्य, मन्दिराणि निपात्य, प्रतिमां विभिद्य, परश्शतान् जनांश्च दासीकृत्य शतशः उष्ट्रेषु रत्नान्यारोप्य स्वदेशमनैषीत्।''

संस्कृतव्याख्या– अस्मिन् गद्यांशे व्यासमहोदयेन यवनानां भारतवर्षे आगमन कालीन भारतस्य राजनैतिकदशा कीदृशी आसीत् इति वर्णनं कृतवान् – अथ– योगिराजवचनस्य श्रवणानन्तरम्, सःमुनिः– प्रथितः ब्रह्मचारिगुरुः 'अवदत्' इति शेषः, भगवन्– हे योगिराट्, धैर्येण– धीरतया, प्रसादेन–प्रसन्नतया, प्रतापेन– तेजसा, वीर्येण– बलेन शौर्येन वा, विक्रमेण– पराक्रमेण, शान्त्या– शमेन,

श्रिया–लक्ष्या, सौख्येन–धनेन, धर्मेण– श्रुतिप्रतिपादितकर्मणा सुकृतेन वा, विद्या–ज्ञानेन, च–पुनः, सममेव– साकमेव, तत्रभवति– श्रीमति, वीरविक्रमादित्ये–एतदाख्ये उज्जयिनीशासके, परलोकं, सनाथवति अलंकृतवति याते वा, शनैःशनैः–मन्दं मन्दम्, पारस्परिकविरोधशिथिलीकृत– स्नेहबन्धनेषु– पारस्परिकविरोधेन विशिथिलीकृतानिस्नेहबन्धनानि यैः तेषु, राजसु– नृपेषु, भामिनीभ्रभङ्गभूरिभावपराभूतवैभवेषु भामिनीनां–''सुन्दरी रमणी रामा कोपना सैव भामिनी'' इत्यमरः– ये भ्रूभङ्गाः विलासाःभूरिभावाश्च हावभावाद्याः तेषां प्रभावेण, पराभूतानि–तिरस्कृतनि, वैभवानि– धनानि येषां तेषु तादृशेषु, भटेषु–शूरेषु, स्वार्थचिन्ताविषये संलग्नेषु, अमात्यवर्गेषु– सचिववृन्देषु, प्रशंसामात्रप्रियेषु–आत्मश्लाघाप्रियेषु,प्रभुषु– अधिकारिवर्गेषु, ''इन्द्रस्त्वं– त्वं पुरन्दरः, वरुणस्त्वं – त्वम् अम्भसां पतिः, कुबेरस्त्वम्– त्वम् धनाधिपः'' इति– इत्थं प्रकारेण, वर्णनामात्रसक्तेषु– आख्यानासक्तेषु, बुधजनेषु– पंडितेषु, कश्चन् कोऽपि गजिनीस्थाननिवासी– 'गजनी' इत्याख्यदेशवासी, महामदो– महमूद इत्याख्यः यवनः– म्लेच्छः, ससेनः– सेनयासहिता, प्राविशत्– प्रवेशंकृतवान्, भारतवर्षे–भारतदेशे। स च– महमूदगजनी इति नाम्ना प्रथितः स यवनः, च–पुनः, प्रजां–जनतां, विलुण्ठ्य– लुण्ठयित्वा, मन्दिराणिदेवगृहानि, निपात्य– पातयित्वा, प्रतिमाः देवप्रतिमाः, विभिद्य– विच्छिद्य, परश्शतान्– शताधिकान्, जनान्–देशवासिनो नरांश्च, दासीकृत्य– सेवकं कृत्वा, शतशः– अनेकशः सहस्रा वा उष्ट्रेषु–क्रमेलकेषु, रत्नान्यारोप्य– धनानि संस्थाप्य, स्वदेशं– निजदेशं गजनीमितिभावः, अनैषीत्– नीतवान्।

हिन्दी रूपान्तर – तदनन्तर (मौन हो जाने पर) उन मुनि ने कहना प्रारम्भ किया – हे भगवन् ! धैर्य, प्रसन्नता, प्रताप, तेज, वीरता, पराक्रम, शान्ति, शोभा,सुख, धर्म एवं विद्या के सहित श्रीमान् वीरविक्रमादित्य के परलोक चले जाने पर, धीरे–धीरे आपसी कलह के कारण राजाओं के पारस्परिक स्नेहबन्धनों के शिथिल हो जाने पर, वीर योद्धाओं के कामिनियों के कटाक्षों एवं

हावभाव के वशीभूत होकर सारी सम्पत्ति नष्ट कर देने पर, मन्त्रियों के केवल स्वार्थसाधन की चिन्ताओं में निमग्न होने पर, राजाओं के प्रशंसाप्रेमी हो जाने पर, विद्वानों के '' आप इन्द्र हैं'', ''आप वरुण हैं'', ''आप कुबेर हैं'– इस प्रकार से (चाटुकारितापूर्ण) वर्णनमात्र में आसक्त हो जाने पर, गजिनी देशनिवासी महमूद नामक किसी यवन ने सेनासहित भारतवर्ष में प्रवेश किया और वह प्रजाओं को लूटकर, मन्दिरों को गिराकर, प्रतिमाओ को तोड़कर, सैकड़ों से अधिक मनुष्यों को दास बनाकर, सैकड़ों ऊँटों पर रत्नों को लादकर, अपने देश (गजनी) ले गया।

विशेष – इस गद्यखण्ड में प्रसादगुण एवं पाञ्चालीरीति का प्रयोग हुआ है। जिसका लक्षण है – ''शब्दार्थयोः समो गुम्फः पाञ्चालीरीतिरिष्यते।'' यहाँ चूर्णक शैली का गद्य प्रयोग हुआ है। इस गद्यांश में व्यास जी ने दैन्य, चिन्ता, विषाद मोह आदि भावों का सजीव चित्रण किया है।

शिवराजविजय– एवं स ज्ञातास्वादः पौनः पुन्येन द्वादशवारमागत्य भारतमलुलुण्ठत्। तस्मिन्नेव च स्वसंरम्भे एकदा गुर्जरदेशचूडायितं सोमनाथतीर्थमपि धूलीचकार। अद्य तु तत्तीर्थस्य नामापि केनापि न स्मर्यते। परं तत्समये तु लोकोत्तरं तस्य वैभवमासीत्। तत्र हि महार्हवैदूर्य पद्मरागमाणिक्यमुक्ताफलादिजटितानि, कपाटानि, स्तम्भान्, गृहावग्रहणीः, भित्तीः, वलभीः, विटङ्गानि च निर्मथ्य चञ्चच्चाकचक्यचकितीकृतावलोचकलोचननिचयां शृङ्खलावलम्बिनीं महादेवमूर्तावपि, गदामुदतूतुलत्।

संस्कृतव्याख्या– अस्मिन् गद्यखण्डे कविना सोमनाथमन्दिरे महमूदगजिन्याः आक्रमणं, बर्बरत्वं, नृशंसत्वं च चित्रितवान्– एवम्– अनेन प्रकारेण, सः– महमूदगजनी नामा आक्रान्ता, ज्ञातास्वादः– ज्ञातलुण्ठनरसः, पौनः पुन्येन– भूयोभूयः, द्वादशवारम्, आगत्य–आगम्य, भारतम्– एतदाख्यं देशं अलुलुण्ठत्– लुण्ठितवान्। तस्मिन्नेव– लुण्ठनविषयक एव, स्वसंरम्भे– स्वकीये उद्योगे, एकदा एकस्मिन् काले, गुर्जरदेश चूडायितम्– गुर्जरदेशभूषणस्वरूपम्, सोमनाथतीर्थमपि–

सोमनागेश्वरविग्रहमपि धूलीचकार–प्रणाशितवान्। अद्य तु– इदानीन्तु, तत्तीर्थस्य– सोमनाथतीर्थस्य, नामापि– अभिधानमपि, केनापि–केनापि नगरनिवासिना, न स्मर्यते–नहि स्मृतिपथम् समानीयते परन्तु–किन्तु, तत्समयेतस्मिन् काले, लोकोत्तरम्– सर्वलोकश्रेष्ठम्, तस्य– सोमनाथमन्दिरस्य, वैभवम्– सम्पत्, आसीत्–अवर्तत। तत्र हि– सोमनाथदेवालये हि, महार्हवैदूर्यपद्मरागमाणिक्यमुक्ताफलादिजटितानि– बहुमूल्यवैदूर्यलोहितमणिमौक्तिकजटितानि, कपाटानि– द्वाराणि, स्तम्भान्– स्थूणाः, गृहावग्रहणी– गेहदेहली, भित्तीः– कुड्यानि, वलभीः– गोपानसीः, विटङ्कानि च– कपोतपालिका च, निर्मथ्यमन्थनकृत्वा, रत्ननिचयम्– माणिक्यसमूहम्, आदाय– संगृह्य, शतद्वयमणसुवर्णशृङ्खलावलम्बिनीम्– चाकचिक्येन, चकितीकृतः– विस्मेरीकृतः, अवलोकलोचननिचयाः– कृतदृष्ट जननेत्रसमूहाः यया ताम्, महाघण्टाम्– विशालघण्टाम् प्रसह्य–बलात्, संगृह्य– गृहीत्वा, महादेवमूर्तौ– शिवमूर्तावपि, गदाम्– एतदाख्यशस्त्रविशेषम्, उदतूलुलत्– उदतिष्ठपत्।

हिन्दीरूपान्तर– इस प्रकार लूटने का स्वाद लग जाने (चखने) के कारण उसने बारह बार आकर बारम्बार भारत को लूटा। उसी समय अपने लूटने के उद्योग में (संलग्न उसने) एक बार गुर्जरदेश के चूड़ामणिस्वरूप सोमनाथतीर्थ को भी धूल में मिला (नष्ट कर) दिया। आज तो उस तीर्थ का कोई नाम भी स्मरण नहीं करता, किन्तु उस समय उसका वैभव (सम्पत्ति) अलौकिक था। क्योकि वहाँ बहुमूल्य वैदूर्यमणि (मूँगे), पद्मरागमणि, माणिक्य (और) मोतियों से जटित दरवाजों, खम्भों, गृहदेहलियों (ड्योढी) दीवारों, छज्जों, और कबूतरों के घोसलों को मथकर (नष्टकरके), रत्नसमूह को लेकर, दो सौ मन की सुवर्णशृङ्खला से लटकते हुए, (देदीप्यमान होने से अपनी) चमचमाहट से देखने वाले के नेत्रों में चकाचौंध उत्पन्न कर देने वाले विशाल घण्टे को बलपूर्वक लेकर (छीनकर) उसने महादेव की मूर्ति पर भी (प्रहार करने के लिए) गदा उठा ली।

विशेष – 1. इस गद्यांश में व्यास जी ने सोमनाथ महादेव मन्दिर के अलौकिक वैभव का वर्णन किया है, अतः यहाँ उदात्त अलङ्कार है।

2. इस गद्यखण्ड के 'चञ्चच्चाकचिक्यचकितीकृत' वाक्यांश में अनुप्रास की छटा दर्शनीय है। यहाँ प्रसादगुण और पाञ्चालीरीति का प्रयोग हुआ है।

शिवराजविजय – अथ ''वीर गृहीतमखिलं क्तिम् पराजिताऽऽर्यसेनाः, बन्दीकृता वयम्, संचितममलं यशः, इतोऽपि न शाम्यति ते क्रोधश्चेदस्मांस्ताडय, मारय, छिन्धि, भिन्धि, पातय, मज्जय, खण्डय, कर्तय, ज्वालय, किन्तु त्यजेमामकिञ्चित्करीं जडां महादेवप्रतिमाम्। यदि एवं न स्वीकरोषि तद् गृहाणास्मत्तोऽन्यदपि सुवर्णकोटिद्वयम्,त्रायस्व, मैनां भगवन्मूर्तिस्प्राक्षीः इति साम्रेडं कथयत्सु रुदत्सु, पतत्सु, विलुण्ठत्सु, प्रणमत्सु च पूजकवर्गेषु, 'नाहं मूर्तिविक्रीणामि, किन्तु भिनद्मि' इति संगर्ज्य जनतायाः हाहाकारकलकलमाकर्णयन् घोरगदया मूर्तिमतुत्त्रुटत्। गदापातसमकालमेव चानेकार्बुदपद्ममुद्रामूल्यानि रत्नानि मूर्तिमध्यादुच्छलितानि परितोऽवाकीर्यन्त। स च दग्धमुखः तानि रत्नानि मूर्तिखण्डानि च क्रमेलकपृष्ठेष्वारोप्य सिन्धुनदमुत्तीर्य स्वकीयां विजयध्वजिनीम् गजिनीम् नाम राजधानीं प्राविशत्।

संस्कृत व्याख्या – अस्मिन् गद्यांशे व्यासमहोदयेन महमूदगजन्यौः प्रताडनम्, क्तापहरणम् नृशंसत्वं च वर्णितवान् –अथ महादेवमूर्तौ गदात्तोलनान्तरम्, ''वीर–हे शूर, गृहीतम्– स्वायत्तीकृतम्, अखिलं– समस्तं, क्तिम्– धनम्, आर्य्यसेनाः– आर्याणां सेना, पराजिता– शत्रुभिःजिताः, वयम्– आर्याः, बन्दीकृताः– बन्धनं प्राप्तः, अमलं– निर्मलम्, यशः– कीर्तिः, सञ्चितम्– सङ्कलितम्, इतोऽपि– एतत् सौभाग्यलाभमपि, चेद्– यदि, ते त्वदीयम् क्रोधः– कोपः, न शाम्यति–न शान्तिमधिगच्छति, तर्हि अस्मिन् आर्यान् ताडय–ताडनं कुरु, मारय–मारणं कुरु, छिन्धि–छेदनं कुरु, भिन्धि– भेदन, कुरु, पातय–निपातय,मज्जय– पारावारतले अवगाहय, खण्डय– खण्डनं कुरु, कर्तय– द्विधाम् कुरु देहमिति भावः, ज्वालय– अग्निज्वालायाम् ज्वलनं कुरु, किन्तु–परन्तु, अकिञ्चित्करीम्–

न किञ्चित्कारिणीम्, इमाम्– एताम् जडाकृतिम् महादेवप्रतिमाम्– शिवविग्रहस्वरूपां मूर्तिम्। यदि– चेत् एवं– इत्थम्, न– नहि, स्वीकरोषि– मन्यसे, तत्– तर्हि, अस्मत्तः शिवभक्तेभ्यः, अन्यदपि एत अधिकमपि– सुवर्णकोटिद्वयम्– गृहाण– स्वीकुरु, त्रायस्व–रक्ष, एनां– एताम्, भगवन्मूर्तिः– शिवप्रतिमाम् मा स्प्राक्षीः– स्पर्शम् मा विधेहि'', इति– इत्थं प्रकारेण, साम्रेडम्– सप्रश्रयम्, अनेकशः कथयत्सु– वदत्सु, रुदत्सु– विलपत्सु, पतत्सु– परिपतत्सु, विलुण्ठत्सु– विशेषेण लुण्ठत्सु, प्रणमत्सु– नमत्सुच पूजकवर्गेषु– शिवसेवकसमूहेषु ''अहं– महमूदगजनीनामा, न मूर्तिम्– प्रतिमां, विक्रीणामि– विक्रयं करोमि;किन्तु– परन्तु, भिनद्मि– भेदनं करोमि, '' इति– इत्थं प्रकारेण, सगर्ज्य– गर्जनं कृत्वा, जनतायाः– प्रजायाः, हाहाकारकलकलम्– हाहाकारकशब्दध्वनिम्, आकर्णयन्– शृण्वन्, घोरगदया– प्रचण्डगदया, मूर्तिम्– प्रतिमाम्, अतूतुटत्– त्रोटयामास।

गदापातसमकालमेव– गदापतनसमये एव, च–अपि, अनेकार्बुदपद्ममुद्रामूल्यानि– अनेकार्बुदपद्मरूप्यकमूल्यानि, रत्नजातानि, मूतिर्मध्यात्– मूर्तिभेदनात्, उच्छलितानि उत्पातितानि, परितः– सर्वतः, अवाकीर्यन्त– प्रकीर्णानि जातानि। स च– महमूदश्च, दग्धमुख– दुष्टः, तानि रत्नानि–तानि सर्वाणि रत्नजातानि, मूर्तिखण्डानि शिवलिङ्गशकलानि च, क्रमेलकपृष्ठेषु– उष्ट्रपृष्ठभागेषु, आरोप्य– समारोप्य, सिन्धुनदम्, एतन्नामिकानदीम्, उत्तीर्य– उत्तरणं कृत्वा, स्वकीयाम्– निजाम्, विजयध्वजनीम्– विजयपताकिनीम्, गजिनीम्– एतन्नामिकाम्, राजधानीम्– राजनगरीम्, प्राविशत्– प्रवेशम् अकरोत्।

हिन्दीरूपान्तर– इसके अनन्तर ''हे वीर (हमारा) समस्त धन ले लिया, आर्यसेना पराजित हो गयी, हम बन्दी बना लिये गये, हमारा धवलयश सञ्चित (संग्रहीत) हो गया, यदि इससे भी तुम्हारा क्रोध शान्त नहीं होता; तो हमें प्रताडित करो, मारो, काट डालो, टुकडे–टुकड़े कर डालों, (पर्वतादि से नीचे) गिरा दो, (समुद्रादि में) डुबा दो, खण्ड कर दो, काट डालो, (अग्निज्वालादि से) जला दो? किन्तु इस कुछ न करने वाली जड़ शिवप्रतिमा को छोड़ दो। यदि

इस प्रकार से (भी) नहीं मानते हो; तो इससे भी अधिक दो सौ करोड़ स्वर्णुद्रायें ले लो, हमारी रक्षा करो, (किंतु) इस शिवमूर्ति का स्पर्श मत करो''– ऐसा भक्तगणों के बारम्बार कहने ,रोने, (पैरों पर) गिरने, लोटने और प्रणाम करने पर (उस दुष्ट ने) '' मैं मूर्ति बेचता नहीं हूँ, किन्तु तोड़ता हूँ '' ऐसी गर्जना करके जनता के हाहाकार ध्वनि को सुनते हुए प्रचण्ड गदा से मूर्ति को तोड़ दिया। गदा के प्रहार के समय ही अनेक अरब पद्म मुद्रा के मूल्य वाले रत्न मूर्ति के मध्य भाग से उछलकर चारों ओर बिखर गये। और वह दग्धमुख (मुँहजला) उन रत्नों और मूर्ति के टुकड़ों को ऊँट की पीठ पर लादकर सिन्धु नदी को पार करके अपनी गजनी नामवाली, विजय पताकाओं से युक्त राजधानी में प्रविष्ट हो गया।

विशेष – 1. इस गद्यखण्ड में चूर्णक शैली के गद्य का प्रयोग हुआ है। यहाँ पाञ्चाली रीति और प्रसादगुण का सौन्दर्य दर्शनीय है।

2. इस गद्यांश में महमूद गजनी की निष्ठुरता और हिन्दुओं की दुरावस्था का वर्णन है।

शिवराजविजयः– अथ कालक्रमेण सप्ताशीत्युत्तरसहस्त्रतमे वैक्रमाब्दे सशोकं सकष्टं च प्राणास्त्यक्तवति महामदे, गोरदेशासी कश्चित् शहाबुद्दीननामा प्रथमं गजिनीदेशमाक्रम्य, महामदकुलं धर्मराजलोकाध्वन्यध्वनीनं विधाय, सर्वाः प्रजांश्च पशुमारं मारयित्वा तद्रुधिरार्द्रमृदा गोरदेशे बहून् गृहान् निर्माय चतुरङ्गिण्यानीकिन्या भारतवर्षं प्रविश्य शीतलशोणितान्यप्यसयन् पञ्चाशदुत्तरं द्वादशशतमितेऽब्दे (1250) दिल्लीमवश्याम्बभूव।

संस्कृत व्याख्या– अस्मिन् गद्यांशे व्यासमहोदयेन महामद राजन्यां विजित्वा तद्देशमधिकृत्य पुनः भारतवर्षे विजेतुमिच्छन् शहाबुद्दीन नाम्ना कश्चित् गोरदेशवासिनः अत्याचारं वर्णितवान्– अद्य– गजिनीगमनान्तरम्, कालक्रमेण– समयानुक्रमेण, सप्ताशीत्युत्तरसहस्रतमे– (1087) एतत्संख्यक वैक्रमाब्दे– विक्रमसंवत्सरे, सशोकं– शोकान्वितम्, सकष्टम्– कष्टसहितम् च– पुनः, प्राणान्–

असून्– त्यक्तवति– परित्यागेसति, महामदे– महमूदनाम्ना जगति विश्रुते, गोरदेशवासी– गोरदेशनिवासी, कश्चित् – कोऽपि शहाबुद्दीननामा– शहाबुद्दीनगोरी इति नाम्ना जगति विश्रुतः, प्रथमं– पूर्वम्, गजिनीदेशं सोमनाथतीर्थविध्वंसकारक– राजधानीम् आक्रम्य आक्रमणं कृत्वा, महामद्धकुलम्– महमूदगजनवीवंशम्, धर्मराजलोकाध्वन्यध्वनीनं– यमराजलोकमार्गे पथिकम्, विधाय–कृत्वा, सर्वाः प्रजाः– तद्देश निवासिनो निखिलाः जनताश्च, पशुमारम्– पशुवत् मारम्, मारयित्वा– व्यापाद्य, तद्रुधिरार्दमृदा– प्रजारक्तार्द्रमृत्तिकया गोरदेशे– गोरीशासितदेशे, स्वदेशी इति तात्पर्यम्, बहून्– प्रचुरान्, गृहान्– गेहान्, निर्माय– विधाय, चतुरङ्ग्यिहस्त्यश्वरथपदातिकया, अनीकिन्या– सेनया, भारतवर्षं– भारताख्यदेशं प्रविश्य, शीतलशोणितान्यप्यसयन्– अनुष्णरक्तानपि असिना हनन्, पञ्चाशदुत्तरद्वादशशतमितेऽब्दे– (1250) एतस्मिन् संवत्सरे, दिल्लीम्– इन्द्रप्रस्थनगरीम् अश्वयाम्बभूव– अश्वैः अतिचक्राम् 'संवत्सरोऽब्दोहायनोऽस्त्र' इत्यमरः।

हिन्दीरूपान्तर– तत्पश्चात् कालक्रम से 1087 विक्रमसंवत् में शोक एवं कष्ट के साथ महमूद (गजनवी) की मृत्यु हो जाने पर, शहाबुद्दीन नामक किसी गोरदेशनिवासी ने पहले गजिनी देश पर आक्रमण करके, महमूद के वंश को यमराज के लोक के मार्ग का पथिक बनाकर, और समस्त प्रजाओं को पशु की भांति मारकर, उनके रुधिर से गीली मिट्टी से गोरदेश में बहुत से गृहों का निर्माण करके, चतुरङ्गिणी सेना के साथ भारत में प्रवेश करके, (युद्ध की इच्छा से रहित होने से) ठण्डे रक्त वाले (भारतीयों) को भी तलवार से काटकर 1250 विक्रम संवत् में दिल्ली में घुड़सवार सेना के साथ चढ़ाई कर दी।

विशेष – 1. इस गद्यांश के 'पशुमारं मारयित्वा' वाक्यांश में लुप्तोपमा अलङ्कार है।

2. इस गद्यखण्ड में कालक्रम से भाग्यचक्र के परिवर्तन का वर्णन है। उत्तररामचरित और स्वप्नवासवदत्तम् में भी इसी तरह का वर्णन मिलता है –

द्र0– ''चक्रारपंक्तिरिव गच्छति भाग्यपङ्क्तः'' (स्वप्न0)

शिवराजविजयः– ततो दिल्लीश्वरं पृथ्वीराजं कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द्रञ्च पारस्परिकविरोध– ज्वरग्रस्तं विस्मृतराजनीतिं भारतवर्षपर्यन्तमखण्डमण्डलम– कण्टकमकीटकिट्टं महारत्नमिव महाराज्यमङ्गीचकार। तेन वाराणस्यामपि बहवोऽस्थिगिरयः प्रचिताः रिङ्गतरङ्गभङ्गा– गङ्गाऽपि शोणितशोणा शोणीकृता, परस्सहस्त्राणि च देवमन्दिराणि भूमिसात्कृतानि।

स एव प्राधान्येन भारते यवनराज्याङ्कुरारोपकोऽभूत। तस्यैव च कश्चित् क्रीतदासः कुतुबुद्दीननामा प्रथमभारतसम्राट् सञ्जातः।

संस्कृतव्याख्या– अस्मिन् गद्यांशे कविना यवनराजस्य अङ्कुरारोपकस्य वर्णनं भारतीयराजानाम् पारस्परिक कलहं च वर्णितवान्– ततः– तदनन्तरम्, दिल्लीश्वरम्– दिल्लीप्रदेशाधिपतिम्, पृथ्वीराजं– एतदाख्यम् चौहानवंशीयभूपम्, कान्यकुब्जेश्वरम्– कन्नौजराज्याधिपतिम्, जयचन्द्रचं– एतन्नामकं भ्रातुरपकारिणञ्च पारस्परिकविरोधज्वरग्रस्तम्– अन्योन्यविद्वेषरूपज्वराभिभूतम्, विस्मृतराजनीतिम्– राजनयज्ञानशून्यम् अथवा विस्मृता राजनीतिः राजधर्म येन तम्, भारतवर्षदुर्भाग्यायमाणम्– भारतदेशस्य समायान्तं दुर्भाग्यम्, आकलय्य– ज्ञात्वा, अनायासेन– सहजेन, उभावपि– द्वावपि, विशस्य–घातयित्वा, वाराणसीपर्यन्तम्– वाराणसीनगरीपर्यन्तम्, अखण्डमण्डलम्– समस्तमण्डलम्, अकण्टकं–निष्कण्टकम् शत्रुरहितमितिभावः, अकीटकिट्टम्– कीटकिट्टशून्यम्, महारत्नमिव– महामणिमिव, महाराज्यम्– विशालराज्यम्, अङ्गीचकार– स्वीचकार। तेन– आक्रमणेन, वाराणस्यामपि–वाराणसीनगर्यामयि, बहवोऽस्थिगिरयः,– अनेके कीकसपर्वताः, प्रचिताः– निर्मिताः, रिङ्गतरङ्गभङ्गा– चञ्चलोर्मिप्रचुरा, गङ्गापि– भागीरथी अपि, शोणितशोणा– रक्तरञ्जिता, शोणीकृता– शोणनदत्वं प्रापिता, पुरस्सहस्त्राणि च– सहस्त्रतोऽधिकानि च, देवमन्दिराणि– देवगृहानि, भूमिसात्कृतानि– धूलिसात्कृतानि खण्डितानि इति भावः। स एव– पूर्वोक्त शहाबुद्दीननामा एव, भारते– भारतवर्षे प्राधान्येन– प्रामुख्येन, यवनराज्या–

ङ्कराऽऽरोपकः– यवनशासनस्य बीजारोपकः, अभूत्–आसीत्। तस्यैव च– शहाबुद्दीनस्यैव च कश्चित्–कोऽपि, क्रीतदासः– सेवकः शहाबुद्दीननामा– एतदाख्यः, प्रथमभारतसम्राट्– भारतस्य प्रथमयवनसम्राट्, सञ्जातः– अभवत्।

हिन्दी रूपान्तर– इसके पश्चात् दिल्ली के सम्राट् पृथ्वी–राज और कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द्र को आपसी कलहरूपी ज्वर से ग्रस्त एवं राजनीति को भूलकर भारत के दुर्भाग्य की भांति आचरण करते हुए जानकर, अनायास ही दोनों को मारकर, कीट और मल से अनविद्ध (निर्मल) महारत्न की भांति काशी तक विस्तृत समस्त जनपदों सहित विस्तृत साम्राज्य को अपने अधीन कर लिया। उसने वाराणसी में भी हड्डियों के पहाड़ बना दिये। चञ्चल तरङ्गों वाली गङ्गा को भी रक्तरंजित कर शोणनद की भाँति बना दिया और हजारों से अधिक देवमन्दिर मिट्टी में मिला दिये।

उसी ने मुख्यरूप से भारतवर्ष में मुसलमानों के राज्य का बीजारोपण किया। उसी का एक कुतुबुद्दीन नाम वाला गुलाम भारत का प्रथम सम्राट् बना।

विशेष– 1. यहाँ 'विस्मृतराजनीतिः' से युधिष्ठिर की राजनीति का सङ्केत किया गया है। उनका मत था –

वयं पञ्च वयं पञ्च वयं पञ्चशताञ्चते।
परैः साकं विवादे तु वयं पञ्चोत्तरशतम्।।''

अर्थात् हम भले ही संख्या में पाँच हैं किंतु शत्रुओं के सामने हम 105 की संख्या वाले हैं।

2. इस गद्यांश के 'महारत्नमिव' में उपमोलङ्कार, 'अस्थिगिरयः' में रूपकालङ्कार एवं 'अकीटकिट्ट' तथा 'रिङ्गतरङ्गभङ्गा शोणितशोण शोणीकृता' में अनुप्रास और स्वभावोक्ति है।

3. यहाँ प्रसाद और माधुर्य गुण तथा पाञ्चाली रीति का प्रयोग हुआ है।

शिवराजविजयः– तमारभ्याद्यावधि राक्षसा एव राज्यमकार्षुः। दानवा एव च दीनानदीदलन् ।अभूत केवलं अकबरशाहनामा यद्यपि गूढ़शत्रुर्भारतस्य तथापि शान्तिप्रियो विद्वत्प्रियश्च। अस्यैव प्रपौत्रो मूर्तिमदिव कलियुगः, गृहीतविग्रहः इव चाधर्मः, आलमगीरोपाधिधारी अवङ्गगजीवः सम्प्रति दिल्लीवल्लभतां कलङ्कयति। अस्यैव पताकाः केकयुषु, मत्स्येषु, मगधेषु, अङ्गेषु, बङ्गेषुः कलिङ्गेषु च दोधूयन्ते, केवलं दक्षिणदेशेऽधुनाऽप्यस्य परिपूर्णो नाधिकारः संवृत्तः।

संस्कृतव्याख्या–गद्यांशेऽस्मिन् कुतुबुद्दीनादग्रे सञ्जाताः मुगलशासकानां नीतिं राजनीतिं च व्यासमहोदयेन वर्णितवान्। तमारभ्य– कुतुबुद्दीनात् प्रारभ्य, अद्यावधि–इदानी यावत्, राक्षसा एव धर्मविरोधिनो यवना एव, राज्यम्– शासनम्, अकार्षुः– कृतवन्तः। दानवा एव– अधर्ममार्गिणः म्लेच्छा एव, दीनान्– दुःखितान्, अदीदलन्– हिंसितवन्तः, केवलम्– एकाकी, अकबरशाहनामा– अकबराख्यः भूपतिः, अभूत– बभूव, यद्यपि सोऽपि भारतवर्षस्य– भारतदेशस्य, गूढ़शत्रुः– प्रच्छन्न रिपुः, अस्ति, तथापि, शान्तिप्रियः, शमप्रियः, विद्वत्प्रियः– बुधजनप्रियश्च अभूदिति शेषः। अस्यैव– अकबरस्यैव, प्रपौत्र– पौत्रस्य पुत्रः नप्तृपुत्रो वा, मूर्तिमत्– साक्षात् कलियुगमिव– पातकप्रधानकलियुगमिव, गृहीतविग्रहः– शरीरधारी, अधर्म इव– पाप इव, आलमगीरोपाधिधारी, अवरङ्गजीवः– औरंगजेब इत्याख्यः, सम्प्रति– इदानीम्, दिल्लीवल्लभतां– दिल्लीश्वरताम्, कलङ्कयति विदूषयति। अस्यैव– अवरङ्गजीवनाम्नः राज्ञः पताका– विजयध्वजा, केकयेषु– पञ्जाब इत्याख्य देशेषु, मत्स्येषु– मत्स्यप्रदेषेषु– राजपूतेषु, वा मगधेषु– बिहारस्य दक्षिणभागेषु, अङ्गेषु– बिहारस्य पूर्वभागेषु, बङ्गेषु बङ्गालप्रदेशेषु, कलिङ्गेषु– उड़ीसाप्रान्तेषु, च दोधूयन्ते–पौनः पुन्येन समुच्छ्रियन्ते, केवलम्–एकः, दक्षिणदेशे– दक्षिणप्रदेशे, अधुनाऽपि इदानीमपि, अस्य– म्लेच्छाधिपतेः, परिपूर्णः– सम्पूर्णः, अधिकारः– स्वामित्वं, न संवृत्तः– नहि सञ्जातः।

हिन्दी अनुवाद –तब से लेकर आज तक इन राक्षसों ने ही राज्य किया है। (ये) दानव ही दीनों की हत्या कर रहे हैं। केवल अकबर नामक बादशाह

ही शान्तिप्रिय और विद्वानों का सम्मान करने वाला था। यद्यपि वह भी भारत का प्रच्छन्न शत्रु था। इसी का प्रपौत्र आलमगीर की उपाधि को धारण करने वाला औरङ्गजेब मूर्तिमान् कलियुग जैसा और शरीरधारी अधर्म की भाँति इस समय दिल्ली के स्वामित्व को कलङ्कित कर रहा है। इसी की विजयपताका (इस समय) केकय देश (पञ्जाब प्रान्त), मत्स्य (राजस्थान) मगध (दक्षिण बिहार) अङ्ग (पूर्व बिहार) बङ्गाल और कलिङ्गदेश (उड़ीसा) में लहरा रही है। केवल दक्षिण देश में इसका पूरा अधिकार नहीं हो पाया है।

विशेष – इस गद्यांश में चूर्णकशैली का गद्य है – 'मूर्तिमदिव कलियुग', ''गृहीतविग्रहचाधर्मः इव'' और उत्प्रेक्षा अलङ्कार है। यहाँ दक्षिण देश की स्वायत्तता से शिवाजी के पराक्रम की सूचना दी गयी है।

शिवराजविजयः– दक्षिणदेशो हि पर्वतबहुलोऽस्ति अरण्यानीसंङ्कुलश्चास्तीति चिरोद्योगेनापि नायमशकन्महाराष्ट्रकेशरिणो हस्तयितुम्। साम्प्रतमस्यैवाऽऽत्मीयोदक्षिणदेशशासकत्वेन ''शास्तिखान'' नामा प्रेष्यत इति श्रूयते। महाराष्ट्रदेशरत्नम्, यवन– शोणित– पिपासाऽऽकुलकृपाणः, वीरतासीमन्तिनीसीमन्त–सुन्दर– सान्द्र– सिन्दूरदान– देदीप्यमान दोर्दण्डः, मुकुटमणिर्महाराष्ट्राणाम्, भूषणं भटानां, निर्धिर्नीतीनम्, कुलभवनम् कौशलानाम् पारावारः परमोत्साहानाम्, कश्चन प्रातः स्मरणीयः स्व– धर्माऽऽग्रहग्रहग्रहिलः, शिव इव धृतावतारः शिववीरश्चास्मिन् पुण्यनगरान्नेदीयस्येव सिंहदुर्गे ससेनो निवसति। विजयपुराधीश्वरेण साम्प्रतमस्य प्रवृद्धवैरम्। ''कार्यं वा साधयेयं देहं वा पातयेयम्'' इत्यस्य सारगर्भा महती प्रतिज्ञा। सतीनाम्, सताम्, त्रैवर्णिकस्य, आर्यकुलस्य धर्मस्य, भारतवर्षस्य च आशासन्तानवितानस्यायमेवाऽऽश्रयः। इयमेव वर्तमाना दशाः भारतवर्षस्य। ''किमधिकम् विनिवेदयामो योगबलावगतसकलगोप्यतमवृत्तान्तेषु योगिराजेषु'' इति कथयित्वा विरराम।

संस्कृत व्याख्या– अस्मिन् गद्यखण्डे व्यासमहोदयेन दक्षिणदेशस्थं शासकानां वर्णनमकरोत्– दक्षिणदेशः– दक्षिणप्रदेशः, हि– निश्चयेन,

पर्वतबहुलोऽस्ति– गिरिप्रचुरो विद्यते, अरण्यानीसङ्कुलः– महदरण्याभिव्याप्तः, च– पुनः अस्ति–वर्तते, इति– अस्माद् हेतोः, चिरोद्योगनामपि– चिरकालपरिश्रमेणापि, अयं– एषः औरङ्जेबः महाराष्ट्रकेसरिणः– महाराष्ट्रसिंहान्, हस्तयितुम्– वशीकर्तुम्, नाशकत्– समर्थो न बभूव। साम्प्रतम्– इदानीम्, अस्यैव– औरङ्गजेबस्य एव, आत्मीयः– सम्बन्धी बहुसम्मतो वा, दक्षिणदेशशासकत्वेन– महाराष्ट्रप्रभृतिदक्षिणप्रदेशस्यप्रशासकत्वेन, शास्तिखाननामा– शाइस्ताखान इत्याख्यः, प्रेष्यते– शासक रूपेण सन्प्रेष्यते, इति श्रूयते– एवं समाकर्ण्यते। महाराष्ट्रदेशरत्नम्– महाराष्ट्रप्रदेशमणिभूतम्, यवनशोणितपिपासाकुलकृपाणः म्लेच्छरक्तपानेच्छाऽऽकुल– कृपाणः, वीरतासीमन्तनीसीमन्तसुन्दर– सान्द्रसिन्दूरदानेदेप्दीयमानदोर्दण्डः– वीरता एव सीमन्तिनी ('सीमन्तः केशवेशे' इत्यमरः) ललना, तस्याः सीमन्ते सुन्दरं रुचिरं सान्द्रं घनं यत् सिन्दूरदानम् नागकेशरर्चनम्, तेन देप्दीयमानः दोर्दण्डः भुजदण्डः यस्य सः, मुकुटमणिः– किरीटरत्नम्, महाराष्ट्राणाम्– महाराष्ट्रप्रदेशवासिजनानाम्, भूषणम्– अलङ्कारः, भटानाम्– शूराणाम्, निधिः– कोषः, नीतीनाम्– नयानाम्, कौशलानाम्– दक्षतानाम्, कुलभवनम्– कुलगृहम्, परमोत्साहानाम्– श्रेष्ठोत्साहानाम्, 'समुद्रोब्धिकूपारः पारावारः सरितपतिः।' पारावारः– सागरम्, कश्चन– कोऽपि, प्रातःस्मरणीयः– आदरणीयः, स्वधर्माग्रहग्रहिलः– सनातनधर्मस्य दृढपरिपालकः, धृतावतारः– अङ्गीकृतावतारः, शिव इव– शङ्कर इव, शिववीरः– शिवाजी इति नाम्न प्रथितश्च, पुण्यनगरात्– 'पूना' इत्याख्यप्रदेशात्, नेदीयस्येव–समीपस्येव च, अस्मिन्– एतस्मिन्, सिंहदुर्गे– सिंहाख्ये दुर्गे, ससेनः– सेनासहितः, निवसति– निवासं करोति।

विजयपुराधीश्वरेण– विजयपुरशासकेण, साम्प्रतम्– अधुना, अस्य–एतस्य, वैरम्–विरोधम्, प्रवृद्धम्– प्रकृष्टरूपेण समुपवृंहितम्। ''कार्यं– करणीयम् वा साधयेयम्– सिद्धम् विधास्यामः अथवा, देहं– शरीरम्, वा– अथवा, पातयेयम्''– नष्टं करिष्यामः, इति– एवं प्रकारिका, अस्य– शिववीरस्य, सारगर्भा– सारवती,

महती–भीषणाश्रेष्ठा वा, प्रतिज्ञा– सङ्कलः। सतीनां– साध्वीनाम्, सतां– सज्जनानाम्, त्रैवर्णिकस्य, आर्यकुलस्य– ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यवर्णयुक्तस्य आर्यवंशस्य, धर्मस्य– सुकृतस्य सनातनधर्मस्य वा, भारतवर्षस्य– भारतदेशस्य, च–पुनः आशासन्तानवितानस्य– आशापरम्पराविस्तारस्य, अयमेव– असावेव, आश्रयः– आधारः। इयमेव– एषा एव, वर्तमाना दशा– साम्प्रतिकी अवस्था, भारतवर्षस्य– भारतदेशस्य अस्तीति शेषः, योगबलावगतसकल– गोप्यतमवृत्तान्तेषु– योगध्यानबलेन सामर्थ्येन वा ज्ञातसमस्तगोपनीयोदन्तेषु, योगिराजेषु– योगिवर्येषु भवादृशेषु ति भावः, किम् अधिकम्– कियद् विपुलम्, विनिवेदयामः– संसूचयामः, इति–एवम्, कथयित्वा– उक्त्वा, विरराम– तूष्णीम् बभूव ब्रह्मचारिगुरुरितिभाव।

हिन्दीरूपान्तरः– (भारतवर्ष का) दक्षिणी प्रान्त निश्चय ही पर्वतों के प्राचुर्य और घने जगलों से व्याप्त है; इसलिए चिरकाल तक प्रयास करने पर भी यह (औरङ्गजेब) महाराष्ट्र के वीरों को पकड़ने में समर्थ नहीं हुआ। इस समय इसी का (कोई निकटस्थ) 'शाइस्ताखान' नाम वाला आत्मीयजन दक्षिणशासक के रूप में भेजा गया है– ऐसा सुना है। महाराष्ट्र प्रदेश के रत्नस्वरूप, यवनों के रक्त की प्यास से व्याकुल कृपाण वाले, वीरतारूपी सुन्दरी की माँग में सुन्दर और सघन (प्रगाढ़) सिन्दूर के दान से देप्दीयमान भुजाओं वाले, महाराष्ट्र निवासियों के मुकुटमणि, वीरों के आभूषण, नीतियों के आकर (खान), कौशलों के कुलभवन (आश्रयभूत), श्रेष्ठ उत्साहों के समुद्र, कोई प्रातः स्मरणीय, स्वधर्म के पालन के हठ में दृढ़ संकल्प, अवतारधारी शिव की भाँति शिवाजी इस पूना नगर के समीप ही सिंहगढ़ में सेना के सहित निवास कर रहे हैं। विजयपुर (बीजापुर) के शासक के साथ इस समय उनकी शत्रुता अत्यन्त बढ़ी हुई है। ''या तो कार्य पूरा करूंगा, या शरीर को नष्ट कर दूँगा'' ऐसी सारगर्भित महान् (कठिन) प्रतिज्ञा (उन्होंने) की है। सती स्त्रियों, सज्जनों, त्रैवर्णिक आर्यवंशियों, सनातनधर्म और भारतवर्ष की आशाओं के विस्तार के ये ही आश्रय हैं। यही भारतवर्ष की वर्तमान दशा है। योगबल से समस्त गुप्त

वृत्तान्तों को जान लेने वाले (आप जैसे) योगिराज से और अधिक क्या कहें – ऐसा कहकर (ब्रह्मचारी गुरु) मौन हो गये।

विशेष– 1. इस गद्यांश में 'महाराष्ट्र केसरिणः' पद से शिवाजी की श्रेष्ठता प्रतिपादित की गयी है। अमरकोशकार के अनुसार व्याघ्र, सिंह, कुञ्जर, पुङ्गव, ऋषभ, शार्दूल, नाग आदि पदों का प्रयोग उत्तरपद के रूप में होने पर श्रेष्ठता का सूचक होता है।

2. इस गद्यांश के 'वीरसीमन्तिनीसीमन्त0' में वीरता में नायिकात्व का आरोप होने से रूपकालङ्कार एवं श्रुत्यानुप्रास अलङ्कार है।

शिवराजविजयः– तदाकर्ण्य विविधभावभङ्गभासुरवदनोयोगिराजो मुनिराज तत्सहचरांश्च निपुणं निरीक्ष्य, तेषामपि शिववीरान्तराङ्गतामङ्गीकृत्य, मुनिवेषव्याजेन स्वधर्मरक्षा व्रतिनश्चोररीकृत्य ''विजयतां शिववीरः, सिद्धयन्तु भवतां मनोरथाः'' इति मन्दं व्याहार्षीत्। अथ किमपि पिपृच्छिषामीति शनैरभिधाय बद्धकरसम्पुटं सोत्कण्ठे जटिलमुनौ ''अवगतम् यवनयुद्ध विजय एव, दैवादापद् ग्रस्तोऽपि च सखिसाहाय्येनात्मानमुद्धरिष्यति'' इति समभाणीत्। मुनिश्च गृहीतमित्युदीर्य पुनः किञ्चिदुद्गतैर्वाष्पबिन्दुभिराकुलनयनों '' भगवन् ! प्रायो दुर्लभो युष्मादृक्षाणां साक्षात्कार इत्यपरापि पृच्छा आच्छादयति माम्'' इति न्यवेदीत्। स च ''आम्! ऊरीकृतम् जीवति सः, सुखनैवाऽऽस्ते'' इत्युदतीतरत्। अथ '' तं कदा द्रक्ष्यामि'' इति पुनः पृष्टवति ''तद्विवाहसमये द्रक्ष्यसि'' इत्यभिधाय बहूनि सान्त्वनावचनानि च गम्भीरस्वरेणोक्त्वा, सपदि उपत्यकाम्, गण्डशैलान्, अधित्यकाञ्चारुह्य पुनस्तस्मिन्नेव पर्वतकन्दरे तपस्तप्तुं जगाम।

संस्कृत व्याख्या– अस्मिन् गद्यखण्डे व्यासमहोदयेन ब्रह्मचारिगुरुयोगिराजश्च गूढवार्तां अनागतघटना विषये पृच्छासमाधानञ्च वर्णितवान् – तत्– ब्रह्मचारिगुरुणा कथितम् देशावस्था चित्रणम्, आकर्ण्य–निशम्य, विविधभावभङ्गभासुरवदनः– अनेकविध भावभङ्गिमौ देप्दीयमान आननः यस्य सः, योगिराजः– महामुनिः, मुनिराजम्– ब्रह्मचारिगुरुम्, तत्सहचरांश्च–

मुनिराजसहवासिनः छात्रान् च निपुणं चतुरं, निरीक्ष्य– दृष्ट्वा, तेषामपि– सहचराणामपि, शिववीरान्तरङ्गतामङ्गीकृत्य– शिववीरान्तरङ्गत्वम् स्वीकृत्य, मुनिवेषव्याजेन– मुनिवेषच्छलेन, स्वधर्मरक्षाव्रतिनः– निजधर्मरक्षकव्रतशीलिनः च उररीकृत्यस्वीकृत्य, शिववीरः– शिवाजी इति नाम्ना प्रथितः शूरः, विजयताम्– प्रवर्तताम्, भवताम्– युष्माकम्, मनोरथाः– अभिलाषाः, सिद्ध्यन्तु, परिपूर्णा भवन्तु, इति एवम्प्रकारेण मन्दम्– अनुच्चैः, व्याहार्षीत्– अकथयत्।

अथ आशीर्वादप्राप्त्यनन्तरम्, किमपि– किञ्चित् पिपृच्छिषामिति–प्रष्टुमभिलषामि, इति–इत्थम्, शनैः मन्दम्, अभिधाय– निगद्य, बद्धकरसम्पुटे– बद्धाञ्जलौ, सोत्कण्ठे– साभिलाषे, जटिलमुनौ–ब्रह्मचारिगुरौ, अवगतम्– ज्ञातम्, यवनयुद्धे– म्लेच्छसंग्रामे, विजय एव– जय एव, दैवा– दैवयोगात्, आपदग्रस्तो अपि– विपत्तियुक्तोऽपि च, सखिसाहाय्येन– सुहृत्सहकारेण, आत्मानं– स्वं, उद्धरिष्यति– उद्धारं करिष्यति, इति– एवम्, उदीर्य–कथयित्वा, पुनः– भूयः, किञ्चित्– किमपि, विचार्य–विचारं कृत्वा एव स्मृत्वा– स्मरणं कृत्वा, एव च, दीर्घमुष्णं वाष्पबिन्दुभिः नेत्रजललवैः, आकुलनयनः– व्याकुलनेत्रः, भगवन् हे देव! प्रायः– सामान्यतया, युष्मादृक्षाणां– भवत्सदृशानां, साक्षात्कारः– दर्शनम्, दुर्लभः– दुखेन लब्धुम् योग्यः, इति एवं, न्यवेदीत– निवेदनं अकथयत्। स च– योगिराजः, आम्– विज्ञातम्, ऊरीकृतम्– स्वीकृतम्, जीवति सः– जीवनं दधाति पुरुषविशेषः, सुखेनैव अनायासेनैव, आस्ते–विद्यते,इति– एवं उदतीतरत्– प्रतिवचनं दत्तवान्, अथ–तदनन्तरम्, तं– पुरुषविशेषं, कदा– कस्मिन् काले, द्रक्ष्यामि– विलोकयिष्यामि, इति पुनः–भूयः, पृष्टवति– सम्पृष्टे सति, तद्विवाहसमये– तस्योद्वाहकाले द्रक्ष्यसि– अवलोकनं करिष्यसि इति, एवम्, अभिधाय– प्रोच्य, बहूनि– अनेकानि, सान्त्वनावचनानि– आश्वासनवचांसि च, गम्भीरस्वरेण– धीरवचसा, उक्त्वा, कथयित्वा, सपदि– तत्कालमेव, उपत्यकाम्– पूर्वतस्य अधः सन्निहिताम् भूमिम्, गण्डशैलान्– स्थूलपाषाणान्, अधित्यकाम्– पर्वतस्योर्ध्वाम् भूमिम् च आरुह्यं आरोहणं कृत्वा, पुनः– भूयः, तस्मिन्नेव– पूर्वोक्त एव, पर्वतकन्दरे–

पर्वतगुहाम्, तपस्तप्तुम्– तपस्यां कर्तुम् जगाम– ययौ।

हिन्दीरूपान्तर– यह सुनकर विविधभावभङ्गिमाओं से प्रकाशमान मुख वाले योगिराज ने मुनिश्रेष्ठ और उनके सहचरों की निपुणता को ध्यान से देखकर तथा ये भी शिवाजी के अन्तरङ्ग लोग हैं और मुनिवेष के बहाने से अपने धर्म की रक्षा करने में कटिबद्ध हैं,– ऐसा जानकर 'वीर शिवाजी की जय हो, आप लोगों के मनोरथ पूर्ण हों'– ऐसा धीरे से कहा। इसके अनन्तर कुछ और ही पूछना चाहता हूँ– ऐसा धीरे से कहकर हाथ जोड़ लेने पर उत्कण्ठा से युक्त जटाधारी मुनि नें ''मैंने जान लिया, यवनों के साथ युद्ध में विजय शिवाजी की ही होगी, दुर्भाग्यवश विपत्तिग्रस्त होने पर भी साथियों की सहायता से स्वयं को बचा लेगा'' ऐसा कहा और ब्रह्मचारीगुरु (मुनि) ने भी 'समझ लिया''– ऐसा कहकर मानों पुनः कुछ विचार करके और स्मरण करके, दीर्घ और उष्णः निःश्वास लेकर, रोके जाने पर भी थोड़ा निकल आये आँसुओं से व्याकुल नेत्र होकर निवेदन किया– '' हे भगवन् आप जैसे (योगियों) का दर्शन प्रायः दुर्लभ है; अतएव एक दूसरी भी जिज्ञासा मुझे उत्कण्ठित कर रही है'' और उन योगिराज ने भी ''हाँ'' ऐसा स्वीकार किया, ''वह जीवित है, सुख से ही है''– ऐसा उत्तर दिया। तदनन्तर '' उसे कब देखूँगा''– ऐसा पुनः पूछने पर ''उसके विवाह के समय देखोगे''– ऐसा कहकर और गम्भीर स्वर से बहुत से सान्त्वनावचन कहकर (योगिराज) शीघ्र ही उपत्यका में (पर्वत की घाटी में), पर्वत से गिरे हुए शिलाखण्डों और अधित्यका (पर्वत के ऊपरी धरातल) में चढ़कर उसी पर्वतगुहा में तप करने के लिए चले गये।

विशेष – 1. इस गद्यांश में चूर्णक शैली के गद्य का प्रयोग हुआ है।

2. यहाँ 'विच्चार्य्येव', 'स्मृत्वेव' इत्यादि स्थलों पर 'इव' निपात उत्प्रेक्षा अलङ्कार का वाचक है। जिसका लक्षण है – 'सम्भावनथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्।''

शिवराजविजयः– ततः शनैः निर्यातेष्वपरिचितजनेषु, संवृत्ते च निर्मक्षिके,

मुनिः गौरवटुमाहूय, विजयपुराधीशाज्ञया शिववीरेण सह योद्धुं ससेनं प्रस्थितस्य अफजलखानस्य विषये यावत् किमपि प्रष्टुमियेष, तावत् पादचारध्वनिमिव कस्याप्यश्रौषीत्। तमवधार्यान्यमनस्के इव मुनौ गौरबटुरपि तेनैव ध्वनिना कर्णयोराकृष्ट इव समुत्थाय, निपुणं परितो निरीक्ष्य पर्यट्य, 'कोऽयम्'? इति च साम्रेडं व्याहृत्य, कमप्यनवलोक्य, पुनर्निवृत्य, '' मन्ये मार्जारः कोऽपि'' इति मन्दं–मन्दं गुरवे निवेद्य पुनस्तथैवोपविवेश। मुनिश्च ''मा स्म कश्चिदितरः श्रौषीत्'' इति सशङ्कः क्षणं विरम्य पुनरुपन्यस्तुमारेभे।

संस्कृतव्याख्या– ततः– योगिराजगमनानन्तरम्, शनैः शनैः– मन्दं मन्दम्, अपिरिचितजनेषु– परिचयरहितजनेषु, निर्यातेषु निर्गते निर्मक्षिके – जनशून्ये च, संवृत्ते– जाते, मुनिः– ऋषिः, गौरवटुं गौरवर्ण ब्रह्मचारिणम्, आहूय– आमन्त्र्य, विजयपुरधीशाज्ञया– विजयपुराधिपतेरादेशेन, शिववीरेण– 'शिवाजी' इति नाम्ना प्रथितेन, महाराष्ट्राधीशेन, सह– साकम्, योद्धुं– युद्धं कर्तुम्, ससेनः– सेनासहितम्, प्रस्थितस्य– विहितप्रस्थानस्य, अफजलखानस्य– एतन्नामकस्य, विषये– सम्बन्धे, यावत्– यस्मिन्न काले, किमपि– किञ्चित् प्रष्टुम्, जिज्ञासितुम्, इयेष– इच्छितवान्, तावत्– तस्मिन् काले, पादचारध्वनिमिव– पदसञ्चारध्वनिमिव, अश्रौषीत्– अशृणोत्। तम्– ध्वनिम्, अवधार्य– विज्ञाय, मुनौ अन्यमनस्के इव– ब्रह्मचारिगुरौ विरसे इव, गौरवटुरपि– गौरबह्मचारिणा अपि, तेनैव– पूर्वोक्तेनैव, ध्वनिना– शब्देन, श्रोत्रयोः– कर्णयोः, कृष्टः– आकृष्टः, इव समुत्थाय– उत्तिष्ठितो भूत्वा, निपुणं– सुष्ठुतया, परितः– समन्ततः, निरीक्ष्य– विलोक्य, पर्यट्य– पर्यटनं कृत्वा परिभ्राम्या वा, कोऽयम्– कः विद्यते, इति एवं प्रकारेण, च– पुनः, साम्रेडम्– बारम्बारम्, व्याहृत्य– प्रोच्य, किमपि– कश्चिदपि, अनवलोक्य– न दृष्ट्वा, पुनः विवृत्य– भूयः परावृत्य मन्ये– चिन्तयामि, कोऽपि– कश्चिदपि, मार्जारः– विडाल, इति– एवं, मन्दं –शनैः, गुरवे– आचार्याय, निवेद्य– उक्त्वा पुनः– भूयः, तथैव– तेनैव प्रकारेण, उपाविवेश– उपाविशत। मुनिश्च कश्चिदितरः, मास्म श्रौषीत् – न खलु अशृणोत्, इति– एवं, सशङ्क– शङ्कायुक्तः, क्षणम्–

क्षणमात्रं, विरम्य– विरामं कृत्वा, पुनः –भूयः, उपन्यस्तुम्– कथयितुम्, आरेभे।

हिन्दी रूपान्तर– तदनन्तर धीरे धीरे अपरिचित लोगों के चले जाने पर, और एकदम शान्त हो जाने पर मुनि ने गौरबटु को बुलाकर, बीजापुरनेश की आज्ञा से शिवाजी के साथ युद्ध करने के लिये सेना सहित प्रस्थान कर चुके अफजलखान के सम्बन्ध में जब तक कुछ पूछना चाहा, तबतक पैरों के चलने की ध्वनि की भाँति कोई (ध्वनि) सुनाई पड़ी। उसे ध्यान से सुनकर मुनि के अन्यमनस्क की भाँति हो जाने पर, गौरवटु भी, उसी ध्वनि के द्वारा मानों कानों से आकृष्ट हुआ सा उठकर, चतुराई से चारों ओर निरीक्षण करके और परिभ्रमण (घूम) कर, 'यह कौन है'– ऐसा बारम्बार कहकर किसी को भी न देखकर पुनः लौटकर ' मेरा मानना है कि कोई बिलाव है''– ऐसा गुरु को धीरे से निवेदन करके पुनः उसी प्रकार बैठ गया। और मुनि नें भी ''कोई दूसरा न सुन ले'' इस आशङ्का से क्षण भर रुककर पुनः कहना आरम्भ किया।

विशेष – 1. इस गद्यखण्ड में चूर्णक शैली के गद्य का प्रयोग हुआ है। यहाँ 'निर्मक्षिक' का तात्पर्य एकान्त से है। यहाँ 'अन्यमनस्के इव मुनौ' वाक्यांश में उत्प्रेक्षालङ्कार है।

शिवराजविजयः– ''वत्स गौरसिंहः अहमत्यन्तं तुष्यामि त्वयि, यत् त्वमेकाकी अपजलखानस्य त्रीनश्वान् तेन दासीकृतान् पञ्चब्राह्मणतनयांश्च मोचयित्वा आनीतवानसीति। कथं न भवेरीदृशः?', कुलमेवेदृशं राजपुत्रदेशीय क्षत्रियाणाम्''। तावत् पुनरश्रूयतमर्मरः पादक्षेपश्च। ततो विरम्य, मुनिः स्वयमुत्थाय, प्रोच्चं शिलापीठमेकमारुह्य, निपुणतया परितः पश्यन्नपि कारणं किमपि नावलोकयामास चरणाक्षेपशब्दस्य। अतः पुनरेकतानेन निपुणं निरीक्षमाणेन गौरसिंहेन दृष्टम् यत् कुटीरनिकटस्थनिष्कुटककदलीकूटे द्वित्रास्तरवोऽतितरां कम्पन्ते इति।

संस्कृतव्याख्या– अस्मिन् गद्यांशे कविना ब्रह्मचारिगुरुणा गौरसिंहं प्रशंसा वर्णितवान्। तदनन्तर कस्यापि पादक्षेपस्य ध्वनिं श्रुत्वा गौरसिंहेन संशयस्थानं

कदलीनिष्कुटम् इति निश्चयं करोति इति वर्णनम् कृतवान्। पुत्र!– वत्स गौरसिंहः, अहं– ब्रह्मचारिगुरुः, अत्यन्तं –भृशम् तुष्यामि– प्रसन्नोऽस्मि, त्वयि– त्वदुपरि, यत्– यतोहि, त्वमेकाकी– गौरसिंहः एकमेव सन् अपजलखानस्य– अफजलखान एतदाख्यस्य यवनवीरस्य, त्रीनश्वान्– त्रिसंख्यकान् अश्वान्, तेन– अफजलखानेन, दासीकृतान्– दासरूपेणाङ्गीकृतान्, पञ्च– पञ्चसंख्यकान्, ब्राह्मणतनयांश्च– द्विजबालकांश्च, मोचयित्वा– मुक्तान् विधाय, आनीतवानसि– उपस्थितवानसि इति। ईदृशः– इदानीम् प्रकारः, त्वं कथं न भवेः– कथं न स्याः? राजपुत्रदेशीय क्षत्रियाणाम्– राजपूताना इति देशस्य राजन्यानां प्रदेशस्य निवासिनां, कुलमेव– वंशमेव, ईदृशम्– एतादृशम्, तावत्– तस्मिन्नेव समये, पुनः भूयः, मर्मरः शुष्कपर्णध्वनिः, पादक्षेपश्च– पादसञ्चारश्च, अश्रूयत्–श्रवणे अपतत्। ततः– तदनन्तरम्, विरम्य– क्षणं स्थित्वा, मुनिः ब्रह्मचारिगुरुः, स्वयम्– आत्मना, उत्थाय– उत्थानं विधाय, एकम्– अन्यतमम्, प्रोच्चम्– अत्यन्तोन्नतम्, शिलापीठम्– प्रस्तरफलकम्, आरुह्य– अध्यारुह्य, निपुणतया– सावधानतया, परितः– समन्ततः, पश्यन्नपि–अवलोकयन्नपि, चरणाक्षेपशब्दस्य– पादनिक्षेपध्वनेः, किमपि– किञ्चिदपि, कारणम्– हेतुम्, न– नहि, अवलोकयामास– अपश्यत्। अतः अस्माद् हेतोः, पुनः– भूयः एकतानेन– एकचित्तेन, निपुणं– सावधानम्, निरीक्षमाणेन– पश्यता, गौरसिंहेन– एतदाख्य ब्रह्मचारिणा, दृष्टम्– अवलोकितम्, यत् कुटीरनिकटस्थनिष्कुटककदलीकूटे– पर्णशालासमीपस्थगृहारामस्य रम्भासमूहे, द्वित्राः– द्वौ वा त्रयो वा, तरवः– वृक्षाः, अतितराम्– अधिकतरां, कम्पन्ते– वेपन्ते इति।

हिन्दीरूपान्तर– ''हे वत्स! गौरसिंह! मैं तुम पर अत्यधिक प्रसन्न हूँ; क्योंकि तुम अकेले ही अफलजखान के तीन अश्वों को और उसके द्वारा बन्दी बनाये गये पांच ब्राह्मणबालकों को छुड़ाकर लाये हो। तुम ऐसे क्यों न हो? राजपूतदेश के क्षत्रियों का वंश ही ऐसा है।'' तब तक पुनः मर्मरध्वनि और पैरों के शब्द सुनाई पड़े। तदनन्तर कुछ रुककर, मुनि नें स्वयं (ही) उठकर, एक

ऊंचे शिलापट्ट पर चढ़कर, सावधानी से देखते हुए भी पैरों की आहट का कोई भी कारण नहीं देखा। इसके पश्चात् पुनः एकचित्त से निरीक्षण करते हुए गौरसिंह ने देखा कि कुटी के समीप स्थित वाटिकागृह के कदली के समूह में दो या तीन वृक्ष अत्यधिक हिल रहे हैं।

विशेष– इस गद्यखण्ड में व्यास जी ने आश्रमवासी मुनियों की सतर्कता राजनीतिनिपुणता और वीरता का चित्रण किया है। राजपूताने की वीरता के द्वारा यहाँ के निवासी गौरसिंह की वीरता का प्रतिपादन होने से यहाँ अप्रस्तुत प्रशंसालंकार है। जिसका लक्षण है – ''क्वचित् विशेषः सामान्यात् सामान्यं वा विशेषतः कार्यनिमितंकार्यञ्च हतोरथ समात्सम्म्। अप्रस्तुतात्प्रस्तुतं चेत् गम्यते पञ्चधा ततः। अप्रस्तुतप्रशंसा स्यात्।''

शिवराजविजयः– तदेव संशयस्थानमित्यङ्गुल्या निर्दिश्य कुटीरवलीके गोपयित्वा स्थापितानामसीनामेकमाकृष्य रिक्तहस्तेनैव मुनिना पृष्ठतोऽनुगम्यामानः, कपोलतलविलम्बमानान् चक्षुश्चुम्बिनः कुटिलकचान् वामकराङ्गुलिभिरपसारयन्, मुनिवेषोऽपि किञ्चित् कोपकषायितनयनः, करकम्पितकृपाकृपणकृपाणो महादेवमाराधयिषुस्तपस्विवेषोऽर्जुनः इव शान्तवीर– रसद्वयस्नातः सपदि समागतवान् तन्निकटे, अपश्यच्चलता– प्रतान– वितान– वेष्टितरम्भा– स्तम्भत्रितयस्य मध्ये नीलवस्त्रखण्डवेष्टितमूर्द्धानं हरितकञ्चुकं श्यामवसनानद्धं कटितटकर्बुराधोवसनम् काकासनेनोपविष्टम्, रम्भालवाल लग्नाधोमुखखड्गत्सरुन्यस्तविपर्यस्तहस्तयुगलम्, लशुनगन्धिभिर्निश्वासैः कदलीकिसलयानि मलिनयन्तम्, नवाङ्कुरितश्मश्रुश्रेणिच्छलेन कन्यकापहरणपङ्कलङ्ककलङ्किताननम्, विंशतिवर्षकल्पं यवनयुवकम्। ततः परस्परम् चाक्षुषे सम्पन्ने दृष्टोऽहमिति निश्चित्य, उत्पलुत्य, कोशात् कृपाणमाकृष्य, युयुत्सुः सोऽपि सम्मुखमवतस्थे। ततस्तयोरेवं सञ्जाताः परस्परमालापाः।

संस्कृतव्याख्या– तदेव–एतदेव, संशयस्थानम्– सन्देहास्पदम् इति–

एवम्, अङ्गुल्या– अङ्गुलिनिर्देशेन, निर्दिश्य– सन्दर्श्य, कुटीरवलीके– कुटीरपटके, गोपयित्वा– गोपनं कृत्वा, स्थापितानाम् – सुरक्षितानाम्, असीनाम्– कृपाणानाम्, एकम्– अन्यतमम् असिम्, आकृष्य– समादाय, रिक्तहस्तेनैव शून्य करेणैव, मुनिना– ब्रह्मचारिगुरुणा, पृष्ठतो– अनुगम्यमानः– अनुव्रज्यमानः, कपोलतलविलम्बमानान्– गण्डतलम्बमानान्, चक्षुश्चुम्बिनः– नेत्रचुम्बिनः, कुटिलकचान्– वक्रकेशान्, वामकराङ्गुलिभिरपसारयन्– सव्येतरहस्ताङ्गुलिभिः निवारयन्, मुनिवेषो– साधुवेषोऽपि, किञ्चित् कोपकषायितनयनः ईषद् क्रोधरक्तनयनः, करकम्पितकृपणकृपाणो– हस्तकम्पित– दयारहितासिः, महादेवं –शिवं, आरिराधयिषुः– सेवितुमिच्छुः, तपस्विवेषोऽर्जुन इव– तापसवेषधारि पार्थ इव, शान्तवीरसद्वयस्नातः– शमोत्साहनिष्पन्नरसद्वयनिष्णातः, सपदि– सत्वरम्, तन्निकटे– तत्समीपे, समागतम्– आगतवान्, अपश्यत च– ददर्श च लताप्रतानवितानवेष्टितरम्भास्तम्भत्रितयस्य– व्रततिसूक्ष्मतन्तु विस्तारवलयित– कदलीस्तम्भत्रयस्य, मध्ये– अभ्यन्तरे, नीलवस्त्रखण्डवेष्टितमूर्द्धानम्– हरितवस्त्रखण्डवलयितशिरोभागम्, हरितकञ्चुकम्– हरितचोलकम्, श्यामवसनानद्ध– कटितरकर्बुराधोवसनम्– श्यामवसनेनाच्छादितकटिप्रदेशं येन तत् अनेकवर्णमधोवस्त्रम्, काकासनेपोपविष्टम्– वायसासनेनोपतिष्ठन्तम्, रम्भालवाललग्नाधोमुखखड्गत्सरुन्यस्त– विपर्यस्तहस्तयुगलम्– रम्भालवाले लग्नम्, अधोमुखस्य खड्गस्य त्सरो मुष्टी वा न्यस्तम्– स्थापितं, विपर्यस्तम्– न्यूब्जीभूतं, हस्तयुगलं – पाणिद्वयम् यस्य तम्, लशुन– गन्धिभिः– लशुनदुर्गन्धिभिः, निःश्वासैः– निःश्वासपवनैः, कदली– किसलयानि– रम्भानवपल्लवानि, मलियनन्तम्– मलिनं कुर्वन्तम्, नवाङ्कुरितश्मश्रुश्रेणिच्छलेन– नवस्फुरितश्मश्रुराजिव्याजेन, कन्यकापहरणपङ्ककलङ्किताननं– कन्यकायाः अपहरणरूपं यत् पङ्कम् तेन कलुषितं वदनं यस्य तथा भूतम् यवनयुवकं – म्लेच्छयुवकं,ततः, –तदनु परस्परम्– अन्योन्यं, चाक्षुषे सम्पन्ने– दर्शने जाते, अहं कृपाणम् असिम्, आकृष्य– गृहीत्वा, युयुत्सुः योद्धुमिच्छुः, सोऽपि– यवनोऽपि,

सम्मुखं, अवतस्थे– स्थितोऽभूत। ततः– तदनन्तरं, तयोः एवं– इत्थं परस्परम् आलापाः– वार्तालापः, सञ्जाताः– संवृत्ताः।

हिन्दी रूपान्तर– वही सन्देहास्पद स्थान है– ऐसा अँगुली से निर्देश (इशारा) करके, कुटी की छप्पर की ओरी (वलीक) में छिपाकर रखी गयी तलवारों में से एक को निकाल करके, खाली हाथ वाले मुनि से अनुगमन किया जाता हुआ, कपोल तक लटकते हुए नेत्रों का स्पर्श करते हुए, कुटिल (घुँघराले) केशों को बायें हाथ की अङ्गुलियों से हटाते हुए, मुनिवेश होने पर भी थोड़ा क्रोध से लाल नेत्रों वाले, हाथ में स्थित निष्ठुर कृपाण वाले, महादेव की आराधना की इच्छा से तपस्विवेष धारण करने वाले अर्जुन की भाँति, शान्त और वीर दो रसों से स्नान किये हुए (गौरसिंह) शीघ्र ही उसके निकट आया, और (वहां आकर उसने) लताओं की विस्तृत बेलों से वितान (चँदोवे) जैसे आकृति से आच्छादित केले के तीन स्तम्भों (वृक्षों) के मध्य नीले वस्त्रखण्ड से शिर को लपेटे हुए, हरे कञ्चुक (कुर्ते) वाले, श्याम (काले) वस्त्र से कटि प्रदेश को बाँधे हुए, चितकबरे अधोवस्त्र (लुन्गी) वाले, काकासन में बैठे हुए, केले के थाले में रखी हुई अधोमुख तलवार की मूँठ (मुट्ठी) पर दोनों हाथों को उल्टा करके रखे हुए, लहसुन की गन्ध से युक्त निःश्वासों वाले, केले के पत्तों को मलिन बनाते हुए, नवीन उगी हुई मूँछों की पङ्क्ति के बहाने, कन्या के अपहरण रूप कीचड़ के कलङ्कपङ्क से कलङ्कित मुख वाले, लगभग बीसवर्षीय यवनयुवक को देखा। तदनन्तर परस्पर नेत्रों के मिल जाने पर वह भी– ' मैं देख लिया गया'– सा निश्चय करके, उछल करके, कोश (म्यान) से तलवार (कृपाण) निकाल करके, युद्ध करने की इच्छा वाला होकर सामने खड़ा हो गया। तत्पश्चात् उन दोनों के मध्य परस्पर इस प्रकार से वार्तालाप प्रारम्भ हुआ।

विशेष – 1. इस गद्यांश में व्यास जी ने प्रसादगुण और ओजगुण तथा पाञ्चाली रीति का प्रयोग किया है।

2. इस वर्णन से यह ज्ञात होता है कि मध्यकाल में आवश्यकता पड़ने

पर आश्रमों में रहने वाले तपस्वी भी देश और धर्म की रक्षा के लिये हथियार उठाते थे।

शिवराजविजयः– गौरसिंहः– कुतोरेयवनकुलकलङ्क।

यवनयुवकः– आः। वयमपि कुत इति प्रष्टव्याः भारतीयकन्दरिकन्दरेष्वपि वयं विचरामः, शृङ्गलाङ्गूलविहीनानां हिन्दूपदव्यवहार्याणाञ्च युष्मादृक्षाणां पशूनामाखेटक्रीडया रमामहे।

गौरसिंह– (सक्रोधं विहस्य) वयमपि स्वाङ्कागतसत्त्ववृत्तयः शिवस्य गणाः अत्रैव निवसामः। तत्सुप्रभातमद्य, स्वयमेव त्वं दीर्घदावदहने पतङ्गायितोऽसि।

यवनयुवकः– अरे रे वाचाल। ह्यौ रात्रौ युस्मत्कुटीरे रुदतीं समायातां ब्राह्मणतनयां सपदि प्रयच्छत्, तत् कदाचिद् दयया जीवतोऽपि त्यजेयम्, अन्यथा मदसिभुजङ्गिन्या दंष्टाः क्षणात् कथावशेषाः संवर्त्स्यथ। कलकलमेतमाकर्ण्य श्यामवटुरपि कन्यासमीपादुत्थाय दृष्ट्वा च हन्तुमेतं यवनवराकं पर्याप्तोऽयं गौरसिंहः इति मा स्म गमदन्योऽपि कश्चित् कन्यकामपजिहीर्षुरिति वलीकादेकविकटखड्गमाकृष्य त्सरौ गृहीत्वा कन्यकां रक्षन् तदध्युषितकुटीरनिकट एव तस्थौ। गौरसिंहस्तु 'कुटीरान्तः कन्यकाऽस्ति, सा च यवनवधव्यसनिनि मयि जीवति न शक्या द्रष्टुमपि, किं नाम स्प्रष्टुम् ? तद् याक्तव कवोष्णशोणिततृषित एष चन्द्रहासो न चलति, तावत् कूर्दन वा उत्फालं वा यच्चिकीर्षसि तद्विधेहि'' इत्युक्त्वा व्यालीढमर्यादया सज्जः समतिष्ठत।

संस्कृतव्याख्या– गद्यखण्डेऽस्मिन् कविना गौरसिंहयवनयुवकयोर्मध्ये वादविवादं प्रादर्शयत्–

गौरसिंहः– रे यवनकुलकलङ्क! हे यवनवंशकलङ्कभूत! कुतः– अत्र कस्मात् स्थानात् समागतोऽसि?

यवनयुवकः– आः– इति खेदे, वयमपि– यवना अपि, कुतः– कुत्रत्यः, इति– एवं प्रकारेण, प्रष्टव्याः– प्रश्नस्य विषयाः सन्ति किम्?

भारतीयकन्दरिकन्दरेष्वपि– भारतवर्षीय शैलगह्वरेषु अपि, वयम्– यवनाः, विचरामः– पर्यटनं कुर्मः। शृङ्गलाङ्गूलविहीनानाम्– विषाणपुच्छहीनानाम्, हिन्दू–पदव्यवहार्याणाम्– हिन्दूपदवाच्यानाम्, च – पुनः, युष्मादृक्षाणाम्– भवत् तुल्यानाम्, पशूनाम्– चतुष्पदानाम्, आखेटक्रीडया– मृगयाखेलया, रमामहे– मनोरञ्जनं विदधामः।

गौरसिंहः– (सक्रोधं विहस्य–हासं विधाय) वयमपि– आश्रमनिवासिनः हिन्दवोऽपि, स्वाङ्कात्सत्ववृत्तयः– निजाङ्कक्रीडागतप्राणिवृत्तयः, शिवस्य–शङ्करस्य, गणाः– रुद्रादयः, अत्रैव– इहैव, निवासं कुर्मः। तत्– तस्माद्धेतोः, सुप्रभातमद्य–सुदिवसोऽद्य, स्वयमेव– आत्मनैव, त्वम्–यवन बालकः, दीर्घदावदहने–तीव्रदावानले, पतङ्गायितोऽसि– पतङ्गमिव समाचरसि। यवनयुवकः– अरे रे वाचाल! हे बहुवाचाल!, ह्यः– रात्रौ विगतायाम् रजन्याम्, युष्मत्– कुटीरे–भवदुटजे, रुदतीम्– विलपन्तीम्, समायाताम्– आगतवतीम्, ब्राह्मणतनयाम्–विप्रसुताम्, सपदि– शीघ्रम्, प्रयच्छत– दत्थ, तत्कदाचित्– तदा केनापि प्रकारेण, दयया– कृपया, जीवतोऽपि– अमृतोऽपि– त्यजेयम्– मुञ्चेयम्, अन्यथा, मदसिभुजङ्गिन्या– मत्करवालसर्पिण्या, दंष्टाः– संदष्टाः, क्षणात्– मुहूर्तानन्तरम्, कथावशेषाः– नाममात्रावशेषाः, संवत्स्यथ– वर्तिष्यध्वे। एतम् कलकलम्– एतद् कोलाहलम्, आकर्ण्य– श्रुत्वा, श्यामबटुरपि– कृष्णब्रह्मचारिणमपि, कन्यासमीपादुत्थाय– बालिकासमीपाद् उत्थाय, दृष्ट्वाअवलोक्य च, एवम्–अमुम्, यवनवराकम्– म्लेच्छवराकम्, अयं गौरसिंहः– एष गौरसिंहः, पर्याप्तः–समर्थः अलम् वा इति, अन्योऽपि– इतरोऽपि, कश्चित् कन्यकां– बालिकाम्, अपजिहीर्षुः– अपहर्तुम् इच्छुः, मा स्म गमत्– नहि आगच्छेत्, इति– एवम्, विचिन्त्य, वलीकात्– पटलप्रान्तात्, एकम् विकटखड्गम्– एकम् भयंकरम् कृपाणम् आकृष्य, त्सरौ–मुष्टौ, गृहीत्वा– अवलम्बय, कन्यकां– बालिकाम्, रक्षन्– संरक्षन्, तदध्युषितकुटीरसन्निकटे– तस्या सनाथवति कुटीरसमीपे, एव–हि, तस्थौ– स्थितः। गौरसिंहस्तु– एतन्नामको ब्रह्मचारी तु, कुटीरान्तः–

पर्णशालमभ्यन्तरम्, कन्यकाऽस्ति–बालिका विद्यते, सा च– बालिका च, यवनवधव्यसननि – म्लेच्छहननरसिके, मयि– गौरसिंहे, जीवति–जीविते सति, न शक्या–न क्षमा, द्रुष्टुमपि– अवलोकयितुमपि, किम् नाम– का चर्चा, स्प्रष्ट्रुम्– स्पर्शम् कर्तुम्? तत्– तस्मात्, यावत्– यावत् कालपर्यन्तम्, तव– यवनयुवकस्य, कवोष्णशोणित– तृषितः कदुष्णरक्तपिपासितः, एषः– अयम् करस्थ इति भावः, चन्द्रहासो न चलति– खड्गो न पतति, तावत्– तावत्कालपर्यन्तम्, कूर्दनम्– उत्पतनम्, वा– अथवा, उत्फालं– उद्योगं वा, यच्चिकीर्षति– यदिच्छसि, तद् विधेहि– तत्कुरु; इति– एवम्प्रकारेण, उक्त्वा– अभिधाय, व्यालीढमर्यादया– युद्धावसान विशेषमर्यादया, सज्जः– उद्यतः सन्, समतिष्ठत्– स्थितवान्।

हिन्दी रूपान्तर– गौरसिंह– अरे यवन कुल के कलङ्कभूत! कहाँ से (आ रहे हो)? यवनयुवक– अरे हम (यवन) कहाँ से आये, यह भी क्या पूछने की बात है? भारत की पर्वतकन्दराओं में हम भी विचरण करते हैं और सींग और पूँछ से रहित हिन्दूशब्द से सम्बोधित किये जाने वाले तुम्हारे जैसे पशुओं की आखेट की क्रीडा से मनोरंजन करते हैं।

गौरसिंह– (क्रोध के साथ किंञ्चित् हँसकर) हम भी तो अपनी गोद में आये हुए को जीविका (आहार) बनाने वाले शिव गण हैं;यही निवास करते हैं, अतः आज का प्रभात अच्छा रहा, (जो) तुम स्वयं ही दीर्घदावानल में जलने के लिए पतङ्गे जैसा आचरण कर रहे हो।

यवनयुवक– अरे रे वाचाल ! कल रात्रि में तुम्हारी कुटिया में जो रोती हुई विप्रकन्या आयी थी, (उसे) शीघ्र ही दे दो, तो कदाचित् जीवित भी छोड़ दूँगा, अन्यथा मेरी तलवार रूपी सर्पिणी से डसे जाकर क्षणमात्र में कथामात्र रूप में शेष रह जाओगे।

इस कोलाहल को सुन कर श्यामबटु भी कन्या के समीप से उठकर और देखकर इस बेचारे यवन को मारने के लिए यह गौरसिंह पर्याप्त है, अतएव कोई दूसरा (भी) कन्या के अपहरण का इच्छुक न आ जाय– ऐसा (सोचकर)

कुटी के प्रान्त से एक भयङ्कर खड्ग निकालकर मुट्ठी में पकड़कर कन्या की रक्षा करता हुआ, उसके निवास से युक्त कुटी के समीप ही खड़ा हो गया। जबकि गौरसिंह ने ''कुटी के भीतर बालिका है और वह यवनवधव्यसनी मेरे जीवित रहते देखी भी नहीं जा सकती; छूने की तो बात ही क्या है? अतएव जब तक तुम्हारे दूषित रक्त की प्यासी यह तलवार नहीं चल रही है; तब तक चाहे कूदो या उछलो। जो चाहो सो करो''– ऐसा कहकर युद्धविज्ञान की पद्धति से तैयार होकर खड़ा हो गया।

विशेष – इस गद्यांश के 'पतङ्गायितोऽसि' वाक्यांश में लुप्तोपमालङ्कार एवं 'मदसिभुजिङ्गन्या' में रूपकालङ्कार है। यहाँ गौर सिंह के साहस शौर्य और विवेक का दर्शन होता है।

शिवराज विजयः–ततो गौरसिंहः दक्षिणान् वामांश्च परश्शतान् कृपाणमार्गानङ्गीकृतवतः दिनकरकरस्पर्शचतुर्गुणीकृतचाकचक्यैः, चञ्चच्चन्द्रहासचमत्कारैश्चक्षूंषि मुष्णतः, यवनयुवकहतकस्य, केनाप्युपलक्षितोद्योगः, अकस्मादेव स्वामिना कलितखेदसञ्जातस्वेदजलजालम्, विशिथिलकचकुलमालं, भग्नभ्रूभयानकभालं शिरश्चिच्छेद।

अथ मुनरपि दाडिमकुसुमास्तरणाच्छन्नायामिव गाढरुधिरदिग्धायां ज्वलदङ्गारचितायां चितायामिव वसुधायां शयानं वियुज्यमानभारतभुवमालिङ्गन्तमिव, निर्जीवीभवदङ्गबन्धचालनपरं शोणितसङ्घातव्याजेनान्तः करणस्थितरजोराशिमिवोद्गरन्तं कलितसायन्तनघनाडम्बरविभ्रमं, सततताम्रचूडभक्षणपातकेनेव ताम्रीकृतं छिन्नकन्धरं यवनहतकमवलोक्य सहर्षं साधुवादं सरोमोद्गमं च गौरसिंहमाश्लिष्य भ्रूभङ्गमात्राज्ञप्तेन भृत्येन मृतककञ्चुककटिबन्धोष्णीषादिकं अन्विष्यानीतम् पत्रमेकमादाय सगणः स्वकुटीरं प्रविवेश।

संस्कृतव्याख्या– अस्मिन् गद्यखण्डे कविना तपस्विजनानां वीरता, युद्धनैपुण्यं–राजनीतिविशारदतीं च वर्णितवान् – ततः– तदनन्तरम्, गौरसिंहः

गौरब्रह्मचारी, दक्षिणान्– सव्यान्, वामांश्च– सव्येतरांश्च, परश्शतान्– शताधिकान्, कृपाणमार्गान्– खड्गयुद्धरीतीः, अङ्गीकृतवतः– स्वीकृतवतः, दिनकरस्पर्श– चतुर्गुणीकृतचाकचक्यैः– सूर्यकिरणस्पर्शेन चतुर्गुणीकृतं चाकचक्यैः – प्रतिभासविशेषैः चञ्चचच्चन्द्रहासचमत्कारैः– सञ्चरः चन्द्रहासस्य चमत्कारैः, चक्षूंषि– नयनानि, मुष्णतः– चोरयतः, यवनयुवकहतकस्य– म्लेच्छयुवकदुष्टस्य, केनाप्युपलक्षितोद्योगः– केनाप्यज्ञातप्रयासः, अकस्मादेव– सहसैव, स्वासिना– स्वस्य चन्द्रहासेन, कलितक्लेदसञ्जातस्वेदजालम्– कलितेन क्लेदेन समुत्पन्नस्य घर्मजालसमूहम्, विशिथिलकचकुलमालम्– परिभ्रष्टाः कचानां केशानांवा कुलस्य मालम् पङ्क्तिम् यस्यतम्, भग्नभ्रूभयानकभालम्– भग्नया छिन्नेन भ्रुवा भयानकं भीषणं भालम्– पङ्क्तिंवा, शिरः– मस्तकं, चिच्छेद– कर्तयामास।

अथ– एतदनन्तरम्, मुनिरपि– ब्रह्मचारिगुरुरपि, दाडिमकुसुमास्तरणाच्छन्नायामिव– दाडिमस्य कुसुमानां प्रसूनानां विष्टरयुक्तायामिव, गाढरुधिरदिग्धायाम्– घनीभूतरुधिरैः लिप्तायाम्, ज्वलदङ्गारचितायाम् प्रज्वलत्स्फुल्लिङ्गव्याप्तायाम्, चितायाम्– शवदाहनस्य साधनभूतायाम् इव, वसुधायाम्– पृथिव्याम्, शयानं– शयनं कुर्वन्तम्, वियुज्यमान– भारतभुवमालिङ्गन्तमिव– वियुज्यमानहिन्दुस्तानभूमिम्, आलिङ्गन्तमिव– आश्लिष्यन्तमिव, निर्जीवीभवदङ्गबन्धचालनपरम्– निष्प्राणीभवताम्, अङ्गबन्धानां शरीरसन्धीनां सञ्चलनस्तम् शोणितसङ्घातव्याजेन– रुधिरव्रातच्छलेन, अन्तः– स्थितजोराशिम् आभ्यन्तरस्थितं रजोगुणनिवहम्, उद्गिरन्तमिव– उद्भवयुक्तमिव, कलितसायन्तनघनाडम्बरविभ्रमं– कलितः– धृतः, सायन्तनस्य– सायंकालीनस्य घनाडम्बरस्य– मेघबिडम्बनस्य, विभ्रमम्– विलासम्, सततताम्रचूडभक्षणपातकेन इव– सततम्– अनारतम् यत् ताम्रचूडस्य 'मुर्गा' इत्याख्य पक्षिणः तस्य भक्षणस्य पापेन इव, ताम्रीकृतम्– रक्तवर्णीकृतम्, छिन्नकन्धरम्, छिन्नग्रीवम्, यवनहतकम् तुरुष्कदुष्टम्, अवलोक्य– दृष्टवा, सहर्षम्– सानन्दम्, ससाधुवादम्– साधुवादेन सहितम्, सरोमोदगमम्– रोमाञ्चेनसहितम् च गौरसिंहम्– म्लेच्छनाशकं गौरवटुम्,

आश्लिष्य– समालिङ्ग्य, भ्रूभङ्गमात्राज्ञप्तेन– भ्रूसङ्केतमात्रेण आदिष्टेन, भृत्येन– अनुचरेण, मृतककञ्चुककटिबन्धोष्णीषादिकमन्विष्य– अपगतासु यवनयुकस्य अङ्गरक्षककञ्चुकम्, कटिबन्धम्– जघनपट्टिकाम् उष्णीषादिकं– शिरोवेष्टनादिकञ्च, अन्विष्य– अन्वेषणंकृत्वा, आसादितम् आनीतम् वा, एकम्– अन्यतमम्, पत्रम्–लेखम्, आदाय– गृहीत्वा, सगणः– ससमूहः, स्वकुटीरम्– स्वस्यपर्णशालाम्, प्रविवेष–प्रविष्टः।

हिन्दीरूपान्तर– तदनन्तर गौरसिंह ने दाहिने और बायें सैकड़ों कृपाणमार्ग को अङ्गीकार करने वाले, सूर्य की किरणों के स्पर्श से चौगुनी किये गये चाकचक्य (चकाचौंध) वाले, चलते हुए चन्द्रहास के चमत्कार से नेत्रों को चौंधियाते हुए, किसी के द्वारा न देखे गये उद्योग वाले, अपने खड्ग से सहसा ही श्रम के कारण उत्पन्न पसीनें की बूँदों से व्याप्त, बिखरे हुए केश समूह वाले भौहों के कट जाने से भयानक मस्तक वाले, दुष्ट यवनयुवक के शिर को काट दिया।

इसके पश्चात् मुनि ने भी मानों अनार के पुष्पों की चादर से व्याप्त, प्रगाढ़रक्त से सनी हुई, जलते हुए अङ्गारों से व्याप्त चिता की भाँति पृथ्वी पर सोते हुए और वियुक्त होती हुई भारतभूमि का मानों आलिङ्गन करते हुए से निर्जीव होते हुए अङ्गबन्धों को हिलाते हुए, रक्तसमूह के बहाने अन्तःकरण में संस्थित रजोराशि को उगलते हुए से, सांयकालीन मेघों के आडम्बर का भ्रम उत्पन्न करने वाले, मानों निरन्तर मुर्गा खाने से रक्तवर्ण किये गये और कटे हुए शिर (गर्दन) वाले, दुष्ट यवनयुवक को देखकर हर्षपूर्वक और साधुवाद देते हुए, रोमाञ्च से युक्त होकर गौरसिंह का आलिङ्गन करके, भ्रूसङ्केत मात्र से आदिष्ट सेवक के द्वारा मारे गये यवनयुवक के कुर्ते, कटिबन्ध तथा पगड़ी आदि को खोजकर लाये गये एक पात्र को लेकर, स्वजनों सहित अपनी कुटी में प्रवेश किया।

विशेष – 1. इस गद्यांश 'चतुर्गुणितचाकचिक्यैः' तथा 'चञ्चत्

चन्द्रहासचमत्कारैः' आदि स्थलों पर अनुप्रास की छटा दर्शनीय है। एवं 'दाडिमकुसुमास्तरणाच्छन्नामिव' में उत्प्रेक्षालङ्कार है। 'ज्वलदङ्गारचितायां' में यमकालङ्कार का प्रयोग भी दर्शनीय है।

2. इस गद्यांश में चूर्णक शैली का गद्य प्रयुक्त है – 'तुर्यं चाल्पसमासकम्'।

3. यहाँ प्रसादगुण और वैदर्भीरीति का प्रयोग है।

4. इस गद्यखण्ड में तपस्वी की वीरता और राजनैतिक निपुणता का सुन्दर वर्णन है।

बोध प्रश्न

1. ब्राह्मणबालिका के अपहरणकर्ता का क्या नाम था?

2. गौरसिंह ने यवनों से कितने ब्राह्मणबालकों को मुक्त कराया था?

3. यवन युवक का किस ब्रह्मचारी से वादविवाद हुआ था ?

4. बीजापुर के दूत का क्या नाम था?

5. ब्रह्मचारी गुरु ने योगिराज से क्या पूछा था ?

❑❑❑

इकाई–11 शिवराजविजयम्

(प्रथम निःश्वास)

शिवराजविजयम् से सम्बन्धित आलोचनात्मक प्रश्न

इकाई की रूपरेखा

11.0 –प्रस्तावना

11.1– उद्देश्य

11.2– शिवराजविजय का संक्षिप्त परिचय

11.3– आधुनिकयुगीन गद्यकाव्य के प्रणेता कवियों की समीक्षा

11.3.1– विश्वेश्वर पाण्डे

11.3.2 –हृषीकेश भट्टाचार्य

11.3.3 –पं. अम्बिकादत्त व्यास

11.3.4 –पण्डिताक्षमाराव इत्यादि कवियों के योगदान का परिचय

11.4.1 गद्यकाव्य के भेदों का उल्लेख एवं शिवराजविजय की विधा

11.4.1.1– कथा

11.4.1.2– आख्यायिका

11. 4.1.3– कथा और आख्यायिका का अंतर

11.5.1.– शिवराजविजय का कथासार

11.6.1 गद्यकाव्य के सामान्य भेद

11. 6. 1 चम्पूकाव्य

11.6. 2 विरुदकाव्य

11. 6.3– करम्भक काव्य

11.6. 4–गद्यकाव्य के भेदों की संक्षिप्त रूपरेखा एवं समीक्षा

11. 7.1 अलङ्कृत गद्यकाव्य परम्परा में शिवराजविजय का मूल्याङ्कन

11. 1– पं. अम्बिकादत्तव्यास की काव्यकला

11.8.1 कथावस्तु

11.8.1–2 पात्रचित्रण

11.8.3– कथोपकथन या संवादयोजना

11.8. 1–4 देशकाल योजना

11.8.1–5 भाषा शैली

11.8.1.6 रसपरिपाक

11. 8. 1.7– अलङ्कारयोजना

11. 8.18– अन्य विशेषताएँ

11.8. 1. 9– निष्कर्ष

11.7– बोध प्रश्न

11.0 प्रस्तावना–

इस इकाई में शिवराजविजय' गद्य काव्य से सम्बन्धित कतिपय संभावित आलोचनात्मक प्रश्न और उनके उत्तर का अध्ययन किया जाना है। इस इकाई में प्रस्तुत प्रश्नों एवं उनके आलोचनात्मक उत्तरों के द्वारा आप सुगमता से यह समझ सकेंगें कि दीर्घ उत्तरों की योजना कैसे करनी चाहिए।

11.1 उद्देश्य–

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी आधुनिक गद्यकाव्य के प्रमुख ग्रंथों एवं रचनाकारों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

शिवराजविजय पर आधारित आलोचनात्मक प्रश्नों के उत्तर किस प्रकार देनें चाहिए यह समझ विकसित होगी।

1. संस्कृत गद्यकाव्य के भेद– प्रभेदों एवं उसके स्वरूप का अध्ययन कर

सकेंगे।

2. पं. अम्बिकादत्त व्यास की काव्यकला की प्रमुख विशेषताओं का परिचय प्राप्त करेंगे।

3. सम्पूर्ण शिवराजविजय को सरलता से हृदयङ्गम कर सकेंगे।

शिवराजविजयम् से सम्बन्धित आलोचनात्मक प्रश्न

11.2 'शिवराज विजय' का संक्षिप्त परिचय–

पं. अम्बिकादत्त व्यास कृत 'शिवराजविजय' ग्रंथ आधुनिक गद्यकाव्य का जाज्वल्यमान रत्न है। इसे कथा विधा में लिखा गया आधुनिक उपन्यास भी कहा जा सकता है। यह संस्कृत साहित्य के गद्यकाव्य का समसामयिक कथा को चित्रित करने वाला ऐतिहासिक उपन्यास है।बाणभट्ट के 'हर्षचरित' के बाद आधुनिक कालखण्ड में लिखा गया यह ग्रंथ लेखन क्षेत्र मे नवीन क्रांति जैसा है। वस्तुतः यह कथा और आख्यायिका का मिश्रित रूप कहा जा सकता है। पं. अम्बिकादत्त व्यास यद्यपि बाणभट्ट से प्रभावित थे; तथापि उन्होंने अपनी रचना में सर्वत्र नवीनता लाने का उद्योग किया है। इस दृष्टि से इस रचना का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। ये आधुनिक लेखको को गद्यकाव्य लेखन में नवीन दृष्टि प्रदान करते है। जिससे यह सिद्ध होता है कि गद्यकाव्य केवल कल्पित कथाओं या राजाश्रित चरित्रो की कथा न होकर तत्कालीन समाज का दर्पण भी सिद्ध होता है।

शिवराजविजय' पर आधारित कतिपय लघुउत्तरीय प्रश्न परीक्षाओं में किये जाते हैं। जिनमें से कतिपय प्रश्नों के उत्तर निम्न है।

11.3 आधुनिक युगीन गद्यकाव्य के प्रणेता कवियों की समीक्षा करिये ?

उत्तर – संस्कृत गद्यकाव्य के आधुनिक युग का प्रारम्भ 16 वीं शताब्दी से होता है। पण्डितराज जगन्नाथ मध्ययुगीन गद्यसाहित्य के अंतिम कवि कहे

जा सकते है। इस आधुनिक युग के प्रमुख गद्यकारों का परिचय इस प्रकार है–

11.3. विश्वेश्वर पाण्डेय– आचार्य विश्वेश्वर पाण्डेय को आधुनिक युग का ख्यातिलब्ध साहित्यकार कहा जा सकता है। इन्होंने व्याकरण ,दर्शन एवं साहित्य की विविध विधाओं पर अपनी लेखनी का कौशल दिखाया है। 'मंदारमंजरी' को इनका ख्यातिलब्ध गद्यकाव्य कहा जा सकता है। आचार्य विश्वेशर पाण्डेय जी ने अपने इस गद्यकाव्य में अपने पूर्ववर्ती बाणभट्ट का अनुकरण किया है, तथापि मंदारमंजरी को इनका सर्वोत्कृष्ट काव्य माना जा सकता है। यह कादम्बरी की भाँति दो भागों में विभक्त गद्यपद्यमय रचना है इसका नायक चंद्रभानु है, एवं नायिका चंद्रकेतु और चंद्रलेखा के पुत्री मंदारवती है इस रचना में कथा के साथ ही उपकथा का प्रवाह भी चलता जाता है। इसके वर्णन बड़े ही मनोहारी है। यह आचार्य विश्वेश्वर की उदात्त और प्रौढ़ रचना है। इसका निर्माण वैदर्भीशैली में हुआ है। इसमें सुन्दर पदन्यासु अलङ्कारों का उचित प्रयोग, प्रकृतिवर्णन तथा तत्कालीन समाज का चित्रण प्राप्त होता है। आगामी संस्कृत गद्यकाव्य इस ग्रंथ से अपना पाथेयग्रहण करते हैं।

11.3.2– हृषीकेश भट्टाचार्य– इन्होंने 'प्रबन्धमंजरी' की रचना करके गद्यकाव्यमाला में एक अप्रतिम पुष्प संयोजित किया है। यह 11 निबन्धों का संग्रहग्रन्थ है, जो वैदर्भीशैली में लिखे गये हैं। इस ग्रंथ की भाषा ओजोमयी एवं प्रवाहपूर्ण है। यद्यपि इस ग्रंथ में दीर्घसामासिकपदों का प्रयोग हुआ है, तथापि इसमें पदविन्यास अत्यन्त सरल और बोधगम्य है। कहीं कहीं व्यङ्ग्य और विनोद की झलक भी मिलती है। इस कारण इन्हें आधुनिक गद्यकारों में सम्मान की दृष्टि से देखा गया है।

11.3.3 पं. अम्बिकादत्त व्यास– आचार्य अम्बिकादत्त व्यास के पूर्वपुरुष राजस्थान के भानुपुर के निवासी थे; किन्तु इनके पितामह राजाराम जी जब काशी आये तो यहीं के होकर रह गये। इनका स्थितिकाल 1888 ई,

सन् था। इन्होंने 42 वर्ष की अल्पायु में ही 60 से अधिक ग्रंथों की रचनाकर डाली थी। 'शिवराजविजय' इनका प्रसिद्ध ऐतिहासिक गद्यकाव्य है। ये विविध विधाओं में लेखन कार्य करते थे। 'शिवराजविजय 'को इनका कीर्तिस्तम्भ कहा जा सकता है। इस काव्य में इन्होंने वीर शिवाजी के चरित्र को दर्शाया है। इसकी शैली पदविन्यास मनोहर हैं। यह प्राञ्जल और सुबोधशैली में लिखा गया है। यह गद्यकाव्य यद्यपि कादम्बरी से प्रभावित प्रतीत होता है। किन्तु सुन्दरपदविन्यास , अलङ्कार योजना, प्रकृतिवर्णन, समसामयिक चित्रण के कारण यह गद्यकाव्य संस्कृत साहित्य में विशिष्ट स्थान प्राप्त करती है। इसमें काव्य के नवों रसो का दक्षतापूर्ण व औचित्यपूर्ण प्रयोग दृष्टिगत होता है। राजनीति एवं गुप्तचरों के व्यवहार का यही चातुर्यपूर्ण वर्णन मिलता है। ये संस्कृत और हिन्दी के प्रकाण्ड विद्वान् थे। मात्र 42 वर्षो में इन्होंने जितना कार्य किया वह इनकी कीर्ति कौमुदी को अक्षुण्ण रखने में सक्षम है।

11.3.4 पण्डिता क्षमाराव– इनका स्थिति काल 1890 से 1954 के मध्य रहा है। इन्होंने अनेक एकाङ्की नाटक, नाटिका और जीवन चरितो का निर्माण किया है। इन्होंने अनेक लघुकथाओं और निबन्धों का लेखन करके संस्कृत साहित्य को समृद्ध किया है। इनके कथापञ्चक् ग्रामज्योति एवं कथामुक्तावली नामक तीन कथाग्रंथ प्रकाशित हैं। अपने कथाग्रंथों में इन्होंने समसामयिक सामाजिक समस्याओं उकेरा है– यथा– बालविवाह, विधवाविवाह, स्त्री शिक्षा, सतीप्रथा, विश्वबन्धुत्व और अहिंसा तथा सत्याग्रह। देशाटन का अनुभव होने से इनकी रचनाओं में क्षेत्रीय घटनाओं का स्वाभाविक वर्णन मिलता है–

उपर्युक्त लेखकों के अतिरिक्त जग्गूअलङ्कार की ''जयंतिका'', आचार्य मेधाव्रत का कुमुदिनीसंग्रह, नारायण शास्त्रि का 'विद्धचरितपंचकम् ' गणपतिशास्त्री का सेतुयात्रा वर्णकम्' पं. रामशरण त्रिपाठी की कौमुदी कथा कल्लोलिनी, 'वामनचित्तले' की 'लोकमान्य तिकल चरितम्' और रामजी उपाध्याय की

'द्वासुपणी' उपन्यास संस्कृतगद्यकाव्य के प्रसिद्ध ग्रंथ है, जो आधुनिक युगीन गद्यकाव्य के भंडार को समृद्ध बनाते हैं।

11.4 प. गद्यकाव्य के भेदों का उल्लेख करते हुए यह सिद्ध करिये कि शिवराज विजय किस विधा का गद्यकाव्य है?

उत्तर– संस्कृत साहित्य में गद्यकाव्य के कई रूप दिखायी पडते हैं। गद्यकाव्य को परिभाषित करते हुए आचार्य कहते है–

वृत्तगन्धोज्झितं गद्यं मुवन्तकं वृत्तगन्धि च।

भवेदुत्कलिकाप्रायं चूर्णकं च चातुर्विधम्।

अर्थात् छन्द के बन्धन से रहित गद्य 'मुक्तक, वृत्तगन्धि उत्कलिका और चूर्णक ये चार प्रकार के गद्य संस्कृत साहित्य में प्रायः दृष्टिगत होते हैं। आशय यह है कि

1. समास रहित पदों का प्रयोग करके लिखा जाने वाला गद्य 'मुक्तक' कहलाता है। यह गद्य की प्रथम विधा है।

2 जिस गद्य में लम्बे लम्बे सामासिक पदों का प्रयोग होता है उसे 'उत्कलिका' प्राय गद्य कहा जाता है। यह गद्य की द्वितीय विधा है। कादम्बरी कथा इसका उदाहरण है।

3 जिस गद्य में वृत्तों (छन्दों) के अंश यत्र तत्र प्रयुक्त होते हैं;उसे 'वृन्तगन्धि' गद्यकाव्य कहा जाता है।

4. चतुर्थ प्रकार की विधा 'चूर्णक' गद्य की है। इस गद्य में छोटे–छोटे समस्त पदों का प्रयोग होता है। शिवराज विजय के गद्य में इस विधा को देखा जा सकता है। इन चार भेदों के अतिरिक्त कुछ अवान्तर भेद भी गद्यकाव्य के दिखाई देते है। इसमें गद्यकाव्य की दो विधाएँ मानी गयी हैं।

11.4. कथा– आख्यायिका कथा का उत्तम उदाहरण बाणभट्ट की कादम्बरी कथा का उदाहरण है। एवं 'हर्षचरितम्' आख्यायिका का उत्तम

उदाहरण है। गद्यकाव्य के इन भेदों का प्रथम उल्लेख अग्निपुराणं में मिलता है। आचार्य रुद्रट ने 'काव्यालङ्कार' में एवं आचार्य दण्डी ने 'काव्यादर्श' में इन भेदों की चर्चा की है; किन्तु इसके भेदक तत्त्वों का स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है। वस्तुतः इन भेदो व भेदक तत्त्वों का विस्तार से वर्णन आचार्य विश्वनाथ नें साहित्य दर्पण में किया है। कथा गद्य का लक्ष्ण बताते हुए आचार्य कहते हैं–

कथायां सरसं वस्तु गद्यैरेव विनिर्मितम्।

क्वचिदत्र भवेदार्या खलादेर्वृत्तकीर्तनम्।।

जिस गद्यविधा में सरस इतिवृत्त की रचना होती है, उस प्रभेद को 'कथा कहा गया है। इस विधा में कहीं– कहीं आर्या छंद का प्रयोग होता है; तो कही परवक्त्र और अपरवक्त्त छंदों का प्रयोग भी देखा जाता है। इस गद्य के प्रारम्भ में मङ्गलाचरण किया जाता है; जो प्रायः नमस्कारात्मक होता है। इसमें कहीं दुष्टों की निन्दा और कहीं सज्जनों की प्रशंसा भी की जाती है। इस विधा का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण आचार्य बाणभट्ट की 'कादम्बरी' को कहा जा सकता है।

11.4.2. आख्यायिका–कथा की भॉति ही आख्यायिका भी गद्यकाव्य का एक अवान्तर भेद है। प्रायः कथा की सारी विशेषताएँ इस विधा में भी दृष्टिगत होती है। इस गद्यकाव्य में कवि अपने वंशानुचरित का उल्लेख करता है, बीच बीच में यत्र तत्र अन्य कवियों की चर्चा भी करता है। इसमें बीच बीच में पद्यात्मक सूक्तियों का प्रयोग भी दृष्टिगत होता है। इस गद्यविधा में कथांशो का विभाजन' आश्वास' नाम से किया जाता है। आश्वास के प्रारम्भ में आर्यावक्त्र और अपरवक्त्र में से किसी एक छंद में आबद्ध पद्यरचना, के द्वारा किसी विषय के वर्णन के व्याज से वर्णनीय विषय की सूचना दी जाती है। इसका लक्षण करते हुए आचार्य विश्वनाथ कहते हैं– ''आख्यायिका कथावत्सनात् कवेवशानुकीर्तनम्। अस्यामन्यां कवीनां च वृत्तं पद्यं क्वेचित्क्वचित्।।

''कथांशानां व्यवच्छेद आश्वास इति कथ्यते।

अन्यापदेशेनाश्वासमुखे भाव्यर्थसूचनम्।।''

उक्त गद्यकाव्यविधा का उत्तम उदाहरण महाकवि बाणभट्ट की 'हर्ष चरितम्' रचना है।

11.4.3. कथा और आख्यायिका का अंतर कथा और आख्यायिका के उक्त लक्षणों का एवं भेदक तत्त्वों का अवलोकन करने पर इनके भेदों को इस प्रकार रेखाङ्कित किया जा सकता है।

1. कथा सदैव कवि की कल्पना पर आश्रित होती है; इसमें थोड़ी–बहुत सत्य घटना का मिश्रण भी रहता है; जबकि आख्यायिका सदैव ऐतिहासिक घटनाक्रम पर आधारित होती है।

2. कथा का वक्ता कथानायक स्वयं होता है; किन्तु कभी–कभी उसका मित्र या कोई अन्य वक्ता भी हो सकता है। जैसे चन्द्रापीड कथा में चन्द्रापीड का मित्र वैशम्पायन कथा वक्ता है।

इसके विपरीत 'आख्यायिका' में कथा का वाचक वक्ता होता है। यह प्रायः आत्मकथा के रूप में प्रस्तुत की जाती है। आचार्य रुद्रट का मत है कि आख्यायिका में वक्ता का नायक होना आवश्यक नहीं है।

3. कथा का विभाजन उच्छ्वासों में नहीं होता है। जबकि आख्यायिका में कथा का विभाजन उच्छ्वासों में ही होता है।

4. कथा में वक्त्र और अपरवक्त्र छंदों का प्रयोग नहीं होता है। जबकि आचार्य विश्वनाथ कही–कहीं इन छंदों के प्रयोग को स्वीकार करते हैं; तो कहीं आर्या छंद का। इसके विपरीत 'आख्यायिका' में वक्त्र और अपरवक्त्र छंदों के माध्यम से भावी घटनाओं की सूचना दी जाती है।

5. 'कथा' की रचना केल गद्यशैली में ही होती है। आख्यायिका' में कहीं–कहीं पद्य का प्रयोग भी होता है।

6. कथा में संग्राम (युद्ध), कन्याहरण, कन्यालाभ और प्रकृतिवर्णन होता है। इसमें प्रायः विप्रलम्भ श्रृङ्गार रस का प्रयोग होता है। ' आख्यायिका में ऐसे वर्णन नहीं होते।

7. 'कथा' की भाषा संस्कृत और प्राकृत दोनों होती है। इसके विपरीत 'आख्यायिका' की भाषा केवल संस्कृत होती है।

8 कथा में स्वचरितवर्णन नहीं होता; जबकि आख्यायिका में स्वचरित और अन्यकविचरित का वर्णन देखने को मिलता है।

कथा और आख्यायिका के उक्त लक्षणों का सिंहावलोकन करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि 'शिवराजविजय' आख्यायिका शैली का गद्यकाव्य है। क्योंकि यह रचना ऐतिहासिक घटना पर आधारित यथार्थ चित्रण है, अतः इसे आख्यायिका कहा जा सकता है। वस्तुतः कथा और आख्यायिका दोनों गद्यलेखन की दो शैलियाँ है; न कि गद्यकाव्य के भेद। परवर्ती गद्यकारों में कथा और आख्यायिका के उक्त लक्षणों का अनुगमन नहीं किया। जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि काव्यशास्त्र के प्रणेताओं ने, हर्षचरित , कादम्बरी और गुणाढ्य की बृहत्कथा को आधार मानकर ही कथा और आख्यायिका के भेदक तत्वों का वर्णन किया था। आधुनिक गद्यकारों नें उन लक्षणों का व्यावहारिक प्रयोग नहीं किया।

11.5.1 शिवराजविजय के प्रथम निःश्वास का कथासार क्या है?

उत्तर – पं. अम्बिकादत्त व्यास ने प्रथम अङ्क की कथावस्तु का प्रारम्भ मङ्गलाचरण से किया है। इसमें उन्होंने श्रीमद् भागवतपुराण के दो श्लोकों के अर्धांश को उद्धृत किया है। इनमें ''विष्णोर्मायाभगवती यथा सम्मोहितं जगत् '' श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध के प्रथम अध्याय का पचीसवाँ श्लोकार्ध है। जहाँ शुक परीक्षित संवाद के माध्यम से दुष्ट और अन्यायी राजाओं के पापभार से सम्पीडित पृथ्वी के दुख को दूर करने के लिये ब्रह्मा जी ने विष्णु

की मायाशक्ति के प्रभाव का वर्णन किया है। मङ्लाचरण के रूप में उद्धृत द्वितीय सूक्ति ''हिंस्र स्वपापेन विहिंसितः खलःसाधुः समत्वेन भयाद्विमुच्यते'' जिसका उल्लेख श्रीमद्भागवत के दशमस्कन्ध के छठें अध्याय के तीसरे श्लोक में है। इस द्वितीय सूक्ति में बालश्रीकृष्ण द्वारा चक्रवात का रूप धारण करने वाले तृणावर्त नामक दैत्य के विनाश में नन्दराय और गोपगोपीसमूह के उद्गार हैं। इन श्लोकों से मङ्गल के साथ ही भविष्य में होने वाले कथा नायक वीर शिवाजी की विजय और यवनशासक के भावी विनाश की सूचना भी प्राप्त होती है।

मङ्लाचरण के अनन्तर मुनि के आश्रम से गौरसिंह बालक के सोकर उठने और आदरणीय गुरू के प्रातःसन्ध्या के लिये पुष्पों के चयन का वर्णन है। इसी समय श्यामसिंह नामक एक अन्य ब्रह्मचारी आकर उसे यह कहते हुए पुष्पों का तोडने के लिये मना करता है कि मैने तुम्हारे उठने से पहले ही फूल तोड लिये है; अब और पुष्पो की आवश्यकता नहीं है। तुमने जिस ब्राह्मण कन्या को यवनयुवक के हाथ से बीती रात में बचाया था; उसके माता–पिता की खोज करो; अन्यथा वह भयग्रस्त कन्या उठकर पुनः रोयेगी। इसी समय दोनों की दृष्टि आश्रम के समीपवर्ती पर्वत खण्ड पर पड़ी जिस की गुफा में समाधि लगाने के बाद उठकर आते हुए उन योगिराज को उन्होंने देखा; जिन्होंने विक्रमादित्य के काल में समाधि धारण की थी और अब समाधि का त्याग किया था। वे पर्वत से उतर कर इस आश्रम की ओर ही आ रहे थे। किसी को यह पता नहीं था कि उन ऋषि का क्या नाम था और उन्होंने कब समाधि लगायी थी। उन्होंने ब्रह्मचारियों के गुरु से देश की तात्कालिक व्यवस्था, सामाजिक जीवन और परिदृश्य जानने की जिज्ञासा व्यक्त की। उसी समय आश्रम में स्थित एक बालिका के करुण क्रन्दन को सुनकर वे उसके विषय में पूछते हैं। तब ब्रह्मचारियों के गुरु उस बालिका के वृत्तान्त को बताते है;जिसे सुनकर वे कहते हैं कि वीर विक्रमादित्य के शासनकाल में यह अनाचार कैसे?

यह सुनकर ब्रह्मचारियों के गुरु ने योगिराज को बताया कि यह शिवाजी का शासन काल है और इस समय यवनों के आतङ्क से जनता त्रस्त है। इस पर योगिराज ने शिवाजी के विजय की भविष्यवाणी की और पुनः समाधि लगाने के लिये पर्वत की कन्दरा में चले गये।

योगिराज के जाने के बाद अपरिचित व्यक्तियों के चले जाने पर मुनि ने ब्रह्मचारी को बुलाकर जैसे ही बीजापुर के शासक के सेनापति शाइस्ता खान के बारे कुछ पूछना चाहा; वैसे ही उन्हें केले के वृक्ष के समीप किसी के पैरों की आहट सुनाई दी। तब उन्होंने एक ऊँचे शिलाखण्ड पर चढकर देखा कि गृहवाटिका के सुरमुर में दो तीन केले के वृक्ष हिल रहे है। गौरसिंह उस स्थान को संशयकेन्द्र मानकर कुटी के छप्पर में छिपी हुई तलवार खींचकर जाता है और वहाँ स्थित यवनयुवक से युद्ध करता है। दोनों में ओजस्वी वादविवाद होता है और अंत में खड्गयुद्ध में यवन–युवक मारा जाता है। उसके वस्त्रों की तलाशी लेने पर एक पत्र निकलता है, जिससे लेकर दोनों गुरुशिष्य कुटी में प्रवेश कर जाते हैं। प्रथम निःश्वास की कथा का यही विराम हो जाता है।

4. 11.6.1 गद्यकाव्य के सामान्य भेदों का उल्लेख करते हुए यह सिद्ध कीजिए कि शिवराजविजय किस विधा का गद्यकाव्य है?

उत्तर – संस्कृत साहित्य के काव्यों को गद्यकाव्य और पद्यकाव्य के रूप में वर्गीकृत किया जाता रहा है। पद्यकाव्य के जहाँ महाकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तक काव्य आदि भेद किये जाते हैं, वहीं गद्यकाव्य के भी चम्पू, विरुद्ध, करम्भक आदि अनेक भेद किये जाते हैं। ये गद्यकाव्य के सामान्य भेद है इनका संक्षिप्त परिचय निम्नाङ्कित है।

11.6.1 चम्पूकाव्य– उसे कहते हैं जिसमें' गद्य और पद्य दोनों का मिश्रण होता है। जैसा कि साहित्यदर्पण कार ने कहा है–

''गद्य पद्यमयं काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते'' अर्थात् पद्य से मिश्रित गद्यकाव्य को चम्पूकाव्य कहते हैं। नल चम्पू, यशस्तिलकचम्पू, मदालसा चम्पू आदि काव्य इसके उदाहरण हैं।

11.6 विरुदकाव्य – यह काव्य भी पद्य के सम्मिश्रण से युक्त गद्यकाव्य है; किन्तु इसमें राजाओं का प्रशस्तिगान होता है। इसीलिये यह चम्पूकाव्य से अलग श्रेणी में रखा गया है, विरुद्ध मणिमाला आदि काव्य इस विधा के उदाहरण भूत गद्यकाव्य हैं। ''गद्यपद्यमयी राजस्तुति र्विरुदमुच्यते''।

116.3 करम्भक काव्य– यह गद्यकाव्य अनेक भाषाओं में निर्मित होता है। आचार्य विश्वनाथ द्वारा रचित ''प्रशस्ति रत्नावली'' इसका उदाहरणभूत ग्रन्थ है; गद्य काव्य में सोलह भाषाओं का प्रयोग हुआ है। जैसी कि उक्ति भी है– ''करम्भकं तु भाषाभिर्विविधाभिर्विनिर्मितम्।''

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है पद्यकाव्य की भाँति गद्यकाव्य की भी अनेक विधाये हैं। इसी आधार पर उक्त वर्गीकरण किया गया है।

116.4 इसकी संक्षिप्तरूप रेखा निम्नाङ्कित पट्टि का से समझी जा सकती है–

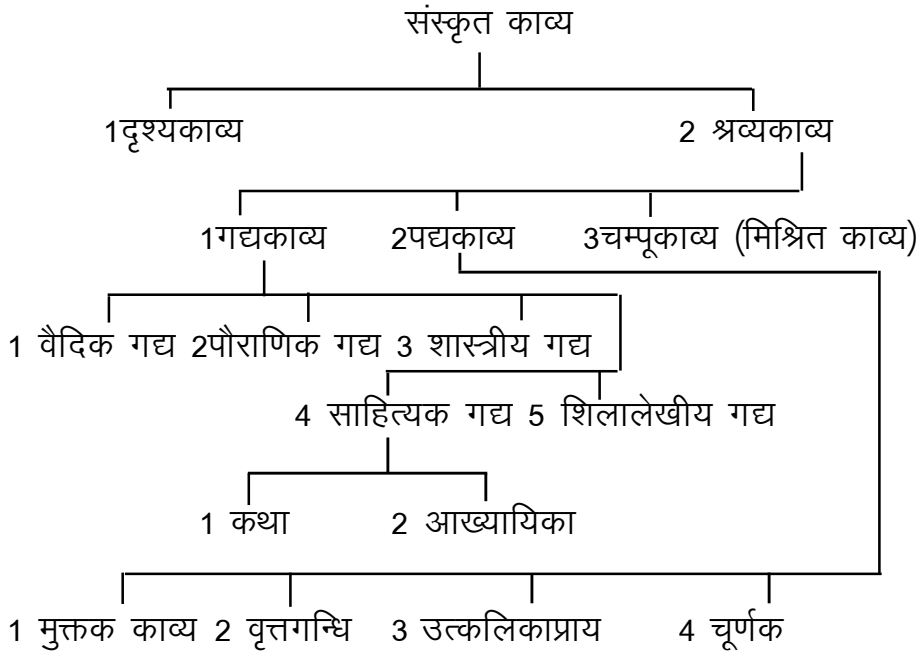

समीक्षा उक्त वर्गीकरण के आधार पर यदि हम ध्यान दें, तो गद्य की अनेकविधता के कई कारण है। साहित्यिक गद्य काव्य के मुक्तक, वृत्तगन्धि आदि चार भेदों का आधार गद्यकाव्य की शैली है। इनमें 'मुक्तक गद्य' सामासिक पदो से रहित होता है। 'वृत्तगन्धि' छंदवत् लययुक्त गद्य है 'उत्कलिकाप्राय' गद्य वह हैं; जहाँ दीर्घसमासों से युक्त गद्यरचना होती है। बाणभट्ट की कादम्बरी इसका श्रेष्ठ उदाहरण है। चूर्णकगद्य अल्पसमासों से युक्त गद्यकाव्य है। पं. अम्बिकादत्तव्यास कृत शिवराज विजय में इसका उदाहरण पदे दृपदे दृष्टिगत होता है। अग्निपुराण, काव्यादर्श आदि काव्यशास्त्री य ग्रंथों में कथानक की दृष्टि से गद्यकाव्य के 1 कथा और 2 आख्यायिका ये दो भेद किये गये हैं। इस दृष्टि से होने वाले विभाजन में शिवराजविजय को आख्यायिका' गद्यकाव्य कहा जा सकता है।

सिद्ध कीजिए कि अलङ्कृत गद्यकाव्य परम्परा में शिवराजविजय उपन्यासविधा की दृष्टि से एक सफल रचना है?

अथवा

उपन्यास कला के आधार पर शिवराजविजय का मूल्याङ्क न करिये?

उत्तर– अलङ्कृत गद्यकाव्य की परम्परा में पं. अम्बिकादत्त व्यास उन यशस्वी रचनाकारों में है; जिन्होंने ''शिवराजविजय'' के द्वारा उपन्यास विधा को प्रस्तुत किया है। यद्यपि शिवराजविजय ऐतिहासिक कथा है, इसलिये उसे आख्यायिका की श्रेणी में रखा जा सकता है, तथापि शिल्प की दृष्टि से वह कादम्बरी के निकट है। वस्तुतः व्यास जी को देववाणी का प्रथम उपन्यासकार कहा जा सकता है। अपने 'शिवराजविजय' नामक गद्यकाव्य में उन्हें मराठा साम्राज्य के रक्षक और उन्नायक शिवाजी के दस वर्षों की जीवनावधि अर्थात् 1657 से 1667 ई. तक की यशोमयी गाथा का वर्णन किया है। व्यास जी

ऐतिहासिक तथ्यों के साथ ही कल्पना प्रसूत पात्रों यथा रघुवीर सिंह, सौवर्णी, श्यामवटु, गौरवटु, देवशर्मा, ब्रह्मचारी गुरु आदि पात्रों की कथा का जोड़कर मुख्य कथा को पुष्पित–पल्लवित किया है।

कथा की रोचकता और उपन्यास कला की दृष्टि से यह एक सफल रचना है। वस्तुतः शिवराजविजय का लेखक प्राचीन संस्कृत गद्यकारों के साथ ही आधुनिक उपन्यासकारों के शिल्प से भी प्रभावित है। कादम्बरी के लम्बे–लम्बे समास जहाँ उसके कथाप्रवाह को किञ्चित् बाधित करते हैं, वहीं शिवराज के वर्णन औचित्यपूर्ण एवं वातावरण की सृष्टि की दृष्टि से अनिवार्य प्रतीत होते हैं। ललित पदावली का प्रयोग इसके लेखक को अन्य रचनाकारों से पृथक् करते हैं। यद्यपि शिवराजविजय के लेखक ने इसे गद्यकाव्य ही कहा उपन्यास या आख्यायिका नहीं कहा; तथापि कथाशिल्प की दृष्टि से इसे आख्यायिका और तकनीक की दृष्टि से कथा के निकट होने के कारण औपन्यासिक गद्यकाव्य कहा जा सकता है। इतिहास की सत्य घटनाओं में कल्पना का पुट देकर महाकवि ने'इसे मनोहारी बना दिया है। कथानक में प्रकृति का कहीं उदात्त तो कहीं भयानक रूप देखने को मिलता है। इसके संवाद रोचक और स्वाभाविक हैं। इसकी कथा में रहस्य, रोमांच, हास्य और यथार्थ का शोभन प्रवाह दृ ष्टिगत होता है। अतएव औपन्यासिक शिल्प की कसौटी पर शिवराजविजय खरी उतरती है।

11.81. पं. अम्बिकादत्त व्यास की काव्यकला का चित्रण करिये

अथवा

– 'शिवराजविजय' के औपन्यसिक तत्त्वों की समीक्षा कीजिए–

उत्तर– पं. अम्बिकादत्त व्यास की काव्यकला उन्हें यशस्वी कवियों/रचनाकारों की समीक्षा की दृष्टि से हम शिवराजविजय का मूल्याङ्कन

करते है; तो इसमें प्रमुख रूप से छह बिन्दुओं पर आधारित मूल्याङ्कन हो सकता है। इसके मुख्य बिन्दु इस प्रकार हैं–

11.8.1. कथावस्तु की दृष्टि से विचार करने पर यह सिद्ध होता है कि इसका कथानक अत्यन्त रोचक है। इसका कारण हैं; इतिहास और कल्पना का सुन्दर समन्वय। शिवाजी यवनों के आधिपत्य एवं अत्याचारों से मुक्ति के लिये संघर्ष करते हैं। इस हेतु वे सिंहगढ़ दुर्ग को केन्द्र बनाकर अपनी योजनाओं को क्रियान्वित करते हैं, जिससे बीजापुर का सुल्तान चिंतित हो जाता है और अफलजखान को सेनापति बनाकर भेजता है कि शिवाजी को पराजित करके अथवा जीवित पकडकर ले आओ ; किन्तु शिवाजी की कूटनीतिक सफलता से अफजलखाँ मारा जाता है। मध्य में श्यामसिंह और सौवर्णी की कल्पित प्रणय कथा है। शिवाजी के पूना पर आधिपत्य करने वाले शाइस्ताखाँ को वह मार भगाता है। इस मध्य में शिवाजी की भेंट भूषण– महाकवि से भेंट होती है। उसके पश्चात शिवाजी के सूरत विजय एवं जयसिंह के साथ युद्ध और सन्धि का वर्णन है। शिवाजी का दिल्ली के दरबार में औरंगजेब से भेंट और उसे कैद कर लेने के बाद कैद से छूटने एवं महाराष्ट्र को विदेशियों से मुक्त कराने हेतु शिवाजी के संघर्ष का भी वर्णन हुआ है।

इस ऐतिहासिक उपन्यास में वीर शिवाजी की कथा आधिकारिक (मुख्य) कथा है। इसके बाद रघुवीर सिंह, गौरसिंह श्यामसिंह, योगिराज आदि की प्रासङ्किक कथाओं का संयोजन है जो कथा के उत्कर्ष का हेतु है। आशय यह है कि शिवराजविजय को कथावस्तु सुसम्बद्ध, रोचक और मनोहर है।

11.8.1.2 पात्रचित्रण– की दृष्टि से विचार करने पर शिवराजविजय में दो प्रकार के पात्र दृष्टिगत होते हैं 1 ऐतिहासिक 2 काल्पनिक। यदि ऐतिहासिक पात्रों पर विचार किया जाय; तो इसमें दो प्रकार के पात्र दृष्टिगत होते हैं– 1 शिवाजी के सपक्षी 2 शिवाजी के विपक्षी या विरोधी। शिवाजी के सपक्षियों में माल्यश्रीक है, जबकि विपक्षी ऐतिहासिक पात्रों की एक शृङ्खला

है इनमें यवनशासक औरङ्गजेब, बीजापुरनरेश, शाइस्ता खान और जसवंत सिंह जैसे हिन्दू और रोशनआरा नामक महिला भी है। यदि हम काल्पनिक पात्रों पर विचार करे; तो श्यामसिंह, गौरसिंह रघुवीर सिंह, ब्रह्मचारिगुरु और योगिराज शिवाजी के पक्ष में है; जबकि चाँदखाँ, रहमत खान आदि उसके विपक्ष में है। स्वयं शिवाजी का व्यक्तित्व ओजस्वी एवं वीरतापूर्ण है।

11. 8.3 कथोपकथन या संवादयोजना– शिवराजविजय के संवाद सजीव, चरित्रानुकूल वातावरण के सर्जक एवं स्वाभाविक है इस कथोपकथन में सुसम्बद्धता है, संक्षिप्तता है, एवं स्वाभाविकता तथा उद्देश्यपूर्णता है। इसके संक्षिप्त एवं नाटकीय संवाद कथावस्तु में प्रवाह एवं रोचकता लाते हैं। वस्तुतः इस काव्य में श्रेष्ठ कथोपकथन के समस्त गुण विद्यमान हैं।

यथा– **गौरसिंहः– कुतो रे यवनकुलकलङ्क।**

यवनयुवकः– आः वयमपि कुत इति प्रष्टव्याः भारतीय कन्दरिका कन्दरेष्वपि वयं विचरामः। '' (शिवराजविजय–1–1)

11.8.1.4 देशकालयोजना– औपन्यासिक बिन्दुओं में देशकाल और वातावरण की योजना एवं तत्कालीन समाज का चित्रण भी महत्वपूर्ण होता है। पं0 अम्बिकादत्त व्यास जी ने शिवराजविजय में मुगलकालीन भारत के सामाजिक धार्मिक और राजनीति का वर्णन किया है। इनके वर्णनों में सहजता और स्वाभाविकता दिखी देती है। तत्कालीन धार्मिक और राजनीतिक अवस्था का वर्णन करते हुए व्यास जी कहते हैं– ''क्वाधुना मन्दिरे मन्दिरे जयजय ध्वनिः? क्व सम्प्रति तीर्थे–तीर्थ घण्टानादः? क्वाद्यापि मठे–मठे वेदघोषः अद्य हि वेदाः विच्छिप वीथीषु विक्षिप्यन्ते, धर्मशास्त्राणि उद्धूय धूमध्वजेषु ध्मायन्ते, पुराणानि पिष्ट्वा पानीयेषु पात्यन्ते।'' (शि0वि0 11)

11.8.1.5 भाषा–शैली– यदि हम इस गद्यकाव्य में प्रयुक्त भाषा एवं शैली पर विचार करते है; तो शिवराज विजय एक सफल रचना है। यहाँ कवि ने बाणभट्ट की भाँति प्राञ्जल शैली का प्रयोग किया है। बाणभट्ट की कादम्बरी

में जहाँ दीर्घसमासों की भरमार है; वहीं व्यास जी के 'शिवराजविजय' में छोटे–छोटे समासों के प्रयोग से कथा प्रवाह में बाधा नहीं आती। भाषा की प्राञ्जलता और अलङ्कारों' के सौन्दर्य का एक उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य है– **''भगवन् श्रूयतां यदि कुतूहलम् ह्यः सम्पादितसायन्तनकृत्ये अत्रैव कुशास्तरणमधिष्ठिते मयि परितः समासीनेषु छात्रवर्गेषु, धीरसमीरस्पर्शेन मन्दंमन्दमान्दोल्यमानासु व्रततिषु, समुदिते यामिनी कामिनीचन्दनबिन्दौ इव इन्दौ———— क्रन्दनमश्रौषम्''।**

आशय यह है कि व्यास जी की भाषा में कोमलकान्त पदावली का प्रयोग ,भाषा की प्राञ्जलता और अलङ्कारों का सौन्दर्य उनकी शैली को और भी सुन्दर बना देती है।

व्यास जी की शैलीगत विशेषाताओं को देखते हुए डॉ. भगवान् दास' कहते है– कि ''शिवराजविजय की भाषा, पात्र, देशकाल और वातावरण के अनुकूल तेजस्विनी, अर्थपूर्ण और सुबोध होने के साथ ही अवसरानुकूल उद्दाम और कोमल भी है; अतएव व्यास जी की भाषा स्वाभाविक अवसरानुकूल एवं प्राञ्जल है; इसमें कोई संदेह नहीं है। व्यास जी को शैली को वैदर्भी और गौडी का मिश्रण कहा जा सकता है। सरस प्रसङ्गों में उन्होंने वैदर्भी–शैली का प्रयोग किया है। कारुणिक प्रसङ्गों में उनके वर्णन ऐसे हैं, मानो शब्द सिसक रहे हों; जबकि वीररस के वर्णन में ओज बहुल शैली का प्रयोग करने से उसे सुनते ही भुजाओं के फड़कने की प्रतीति होती है। राष्ट्रप्रेम प्रसङ्ग में व्यास जी ने सशक्त व्यञ्जनापूर्ण शैली का प्रयोग किया है, अतएव व्यास जी की शैली प्रवाहपूर्ण कही जा सकती है। महाकवि व्यास जी की शैली वस्तुतः वातावरण देश– काल, संस्कृति भावभङ्गिमा, कुलाचार आदि की सुन्दर अभिव्यक्ति करने में सक्षम है। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि गङ्गा की भाँति सतत प्रवाहमान भाव धारा, गतिशील चित्रण, अर्थगाम्भीर्ययुक्त पदंविन्यास, भावानुकूल शब्द, बोधगम्य विषय तथा देशकाल और परिस्थित के अनुकूल

बोधगम्य विषय तथा देशकाल और परिस्थिति के अनुकूल भावसंयोजन इनकी शैली की प्रमुख विशेषताएँ है।

यदि भाषा की दृष्टि से विचार करे, तो व्यास जी जहाँ प्रचण्ड भाषा के प्रयोग में सिदृहस्त हैं; वहीं सरल और लघुवाक्यों के विन्यास में भी निपुण है। यथा– **''बटुरसौ आकृत्या सुंदरः, वर्णेन गौरः जटाभिर्बह्मचारी वयसा षोडशवर्ष देशीयः, कम्बुकण्ठः आयतललाटः सुबाहुः विशाल लोचनः च आसीत्।''**

संक्षेय में हम कह सकते है कि व्यास जी की भाषा सरल, सरस प्रवहमान होने के साथ ही प्रचण्ड भी है। सरलता, सरसता के साथ प्रचण्डता का भाषा में जैसा समन्वय व्यास जी ने किया हैः वैसा अन्य कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता। व्यास जी की वर्णनशैली की यह विशेषता अनुपम है।

11.8.6 रसपरिपाक– शिवराजविजय का अङ्गी (मुख्य) रस वीर है। यद्यपि प्रसङ्ग वश शान्तरस, भयानक आदि अन्य रसो का वर्णन भी है तथा जैसी सुन्दर एवं चित्ताकर्षक अभिव्यक्ति वीररस की है; वैसी अन्य रसों की नहीं है। वीररस का एक सुन्दर उदाहरण द्रष्टव्य है– **अहो! वीरता शिव वीरस्य– अहो! निर्भयता एतत्सेनानीनामहो त्वरितगतिरेतद्घोटकानाम्, आः! किं कथयामः? दृष्ट्वैवं चमत्कारं शिववीरचन्द्रहासस्य न वयं पारयामो, धैर्यं धर्तुम् न शक्नुमो युद्धस्थाने स्थातुम् को नाम द्विशिरो यः शिवेन योद्धुं गच्छेत् ।''**

उक्त कथन में वक्तृ वै शिष्ट्य से भयानक रस की प्रतीति भी होती है। इस गद्यकाव्य में वीररस मुख्य है, तो अन्य रसों की अभिव्यक्ति गौण रूप से है। शान्त रस (निर्वेद) के उदाहरण के लिये योगिराज का यह कथन दर्शनीय है– **मुने! विलक्षणोऽयं भगवान् सकलकलाकलापकलनः सकलकालनकरालः कालः। स एव कदाचित् पयः पूरितन्यकूपारतलानि मरूकरोति । सिंहव्याघ्रभल्लूक, गण्डकफेरुशशसहस्रव्याप्तान्यरण्यानि**

जनपदीकरोति, मन्दिरप्रासादहर्म्यशृङ्गारक– चत्वरोद्यानतडागगोष्ठमयानि नगराणि च काननीकरोति।''

कहीं–कहीं करुण रस की अभिव्यक्ति भी दिखायी देती है। करुणरस का सुन्दर उदाहरण निम्न पङ्क्तियों में दृष्टिगत होता है– **भगवन् ! दम्भोलिघटितेयं रसना, या दारुणदानवोदन्तो दीरणैनं दीर्य्यते, लोहसारमयं हृदयम्, यत् संस्मृत्य यावनान्परसहस्रान् दुराचारान् शतधा न भिद्यते, भस्मसाच्च न भवति। धिगस्मान् येऽद्यापि जीवामः, श्वसिमः विचरामः, आत्मनः आर्यवंश्याश्चाभिमन्यामहे।''**

निष्कर्ष यह है कि वीर रस के मुख्य होते हुए भी अन्य रसो का यथास्थान सुन्दर चित्रण मिलता है। जो कवि के रसज्ञान एवं योजना को उत्कृष्ट बनाता है।

11.8.1.7 अलङ्कारयोजना– महाकवि अम्बिकादत्तव्यास जी ने इस गद्यकाव्य में अलङ्कारों का सन्निवेश रस और वातावरण के अनुरूप ही किया है। यद्यपि शिवराजविजय के गद्य का आदर्श अलङ्कृतशैली का गद्य ही रहा है; तथापि शिवराजविजय में प्रयुक्त अलङ्कार उसके नैसर्गिक सौन्दर्य को अभिभूत नहीं कर पाये हैं। व्यासजी ने इस गद्यकाव्य में अनुप्रास, उपमा, विरोधाभास, परिसंख्या, रूपक आदि अलङ्कारों का रसानुकूल प्रयोग किया है। यथा – इस गद्यखण्ड में अनुप्रास की छटा दर्शनीय है– ''शोक विमोकः कोकलोकस्य,, अवलम्बो रोलम्बकदम्बस्य–'' इसी प्रकार ''कुतूकुतुपकर्करी कण्डोलकटकटाह–कम्बिकडम्बान्–'' आदिस्थलों पर भी अनुप्रास अलङ्कार का सुन्दर प्रयोग दृष्टिगत होता है।

उपमा– जहां तक उपमा अलङ्कार की बात है उसमें व्यास जी ने उपमानों के चयन में बडी उदारता का व्यवहार किया है। उन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र और परिवेश से उपमान प्रस्तुत किये हैं। कवि ने जहाँ मृणाल, कुन्दकोरक, नवनीत आदि प्राकृतिक उपमानों का प्रयोग किया है; वहीं उन्होंने

पात्र के अनुकूल उपमानों का प्रयोग भी किया है। जब गौरसिंह शिवाजी की प्रशंसा करने के बाद यह कहता है कि आज सिंह का सामना सिंह से है, तो अफजलखान के उद्‌गार इस प्रकार से प्रकट होते हैं–''को नाम खपुष्पायितः, शशशृङ्‌गायितः कमठीस्तन्यायितः सरीसृपश्चवणायितः भेकरसन्नायितः वन्ध्यापुत्रायितश्च शिवोऽस्ति।'' अर्थात् आकाशपुष्प जैसा, खरगोश के सींग जैसा, कछुयी के दुग्ध जैसा, साँप के कान जैसा, मेढक की जिह्वा जैसा और बन्ध्यापुत्र जैसा शिव भी भला कोई चीज है। यद्यपि शिवाजी की दृष्टि से उक्त कथन अनुचित है, तथापि उक्त कथन अफलज खाँ का होने से अस्वाभाविक नहीं हैं. खरगोश की सींग, कछुई का दूध , मेढक की जीभ जैसे उपमानों का प्रयोग अफजलखाँ ही कर सकता है। व्यास जी ने शिवराजविजय में यत्र–तत्र विरोधामास अलङ्‌कारों का भी सुन्दर प्रयोग किया है। इसका दुर्गाजी की मूर्ति विषयक एक उदाहरण द्रष्ख्य है– सर्वामयरवर्वपराक्रमां, श्याममापि यशः समूह श्वेतीकृतत्रिभुवनाम् , कुशासनामपि सुशासनाश्रयाम्––––– सूक्ष्मदर्शनामपि असूक्ष्मदर्शनां, ध्वंसकाण्डव्यसनिनीमपि धर्मधौरेयीम्, कठिनापि कोमलाम्, उग्रामपि शान्तां, शोभितविग्रहामपि दृढ़सन्धिबन्धनाम्, कलितगौरवामपि कलितलाघवाम्–––।'' पूर्वोक्त अलङ्‌कारों के अतिरिक्त उत्प्रेक्षा, स्वभावोक्ति, उल्लेख, श्रुत्यनुप्रास, लुप्तोपमा आदि अनेक अलङ्‌कारों का शिवराजविजय में व्यास जी ने सुन्दर प्रयोग किया है। इन अलङ्‌कारों से रसानुभूति में कोई बाधा नहीं आती, अपितु उसके सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। जिससे सिद्ध होता है कि व्यास जी की अलङ्‌कार योजना सुन्दर और वर्णनानुकूल है।

11.8.1.8 अन्य विशेषताएँ– व्यास जी नें कथावस्तु को इतनी सह्रदयता, सुन्दरता और सूक्ष्मता से प्रस्तुत किया है कि कहीं भी कृत्रिमता की प्रतीति नहीं होती। उन्होंने प्रातः काल, का सूर्योदय का, सूर्यास्त, संध्याकाल, सैन्यशिविर, आश्रम और आदि के चित्रण द्वारा वाह्य प्रकृति का जो चित्रण किया है; वह चित्ताकर्षक है। उनका अन्तर्द्वन्द्वों का चित्रण भी नितान्त

हृदयावर्जक है। अफजलखान के सैन्यशिविर के वर्णन को सुनकर एक शब्दचित्र हमारे सामने उपस्थित हो जाता है। इसका एक उदाहरण दर्शनीय है–''क्वचिद् हरिद्रान्हरिद्रा, लशुनं– लशुनं, मरिचं–मरिचं–समीपसंस्थापित कुतूकुतूपकण्डोल–कटकटाहकम्बि कडम्बान् उग्रगन्धीनि मांसानि शूलाकुर्वतः नखम्पचायवागू–स्थालिकासु प्रसारयतः,हिंगुगन्धीनि तेमनानि––––– मदव्याघूर्णित क्षोणनयनान् यवनयुवकान् ''आदि के द्वारा अफजल के सेना का शिविर चित्र उपस्थित हो जाता है।

11.8.1.9 निष्कर्ष

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि पं0 अम्बिकादत्त व्यास को काव्यकला उत्तमकोटि की है। इस साहित्यिक कृति ने गद्यकाव्य के क्षेत्र में युगान्तकारी परिर्वतन–परिवर्धन प्रस्तुत किया है। इस आधुनिक युग की नवचेतना एवं नवीनधारा का प्रतिनिधिकाव्य कहा जा सकता है। इसके रचनाकार ने तात्कालिक युग के परिवेश एवं भावबोध को उकेरने की चेष्टा की है। जिस प्रकार से हिन्दी साहित्य में भारतेन्दुयुग को नवजागरणकाल माना गया है; उसी प्रकार संस्कृत साहित्य में इन्हें युग एवं लोकजागरण का संदेश देकर शिवाजी के माध्यम से जन–जन में जिजिविषा का संचार करने वाली रचनाकार कहा जा सकता है। शिवराजविजय गद्यकाव्य परम्परा की दृष्टि से मृच्छकटिकम् व मुदाराक्षस का अनुकरण करता है। देशप्रेम, राजनीति, नवीनता एवं प्रगतिशील विचारों के साथ ही स्वधर्म की रक्षा की कामना करते हुए इसमें नवीन एवं प्राचीन परम्पराओं का समन्वय किया गया है।

इस ऐतिहासिक उपन्यास में संस्कृत साहित्य में अप्रचलित भावों और विचारों को प्रकट करने के लिये नवीन शब्दों का सृजन किया गया है। दोनों सम्प्रदायों के धार्मिक विश्वास, पहनावा, जीवनदृष्टि, राजदरबार, देवालय, आश्रम, सैन्यशिविर आदि का सजीव चित्रण करके कवि ने तत्कालीन समाज और राजनीति से सम्बंधित विचार प्रकट किये है। जो कवि की सूक्ष्म दृष्टि का

परिचायक है। इसकी अन्य विशेषताओं में इसका संवाद सौष्ठव है। इसके संवादों से वाक्चातुर्य, तत्कालीन नीति और व्यवहार कुशलता का परिचय मिलता है। जिससे यह सिद्ध होता है कि पं. अम्बिकादत्त व्यास अपनी प्रतिभा और पाण्डित्य से प्रकाण्ड पण्डितों का भी मात देने में सक्षम थे।

'शिवराजविजय' की भाषाशैली कभी–बाणभट्ट के समीप पहुंचती है; तो कही वैदभी–गौडी रीति का समन्वय करके अभिनव चमत्कार उत्पन्न करती है। इसमें गद्य की प्रौढ़ता एवं पदयोजना में संश्लिष्टता होने पर भी प्रवाह में सातत्य है। बीच–बीच में मुहावरों का पुट इसके वर्णनों में रोचकता और प्रभावोत्पादकता लाता है। जिससे यह सिद्ध होता है कि इसका रचनाकार अपने प्रयोजन और आकाङ्क्षा की दृष्टि से एक सफल कवि के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त करने के योग्य है।

11.7.1.9 बोधप्रश्न

1 शिवराजविजय किस शैली का गद्य काव्य है ?

2 गद्यकाव्य के मुख्य भेद कितने हैं?

3 शिवराजविजय कथा है या आख्यायिका?

4 पं. अम्बिकादत्त व्यास ने कितने ग्रंथों की रचना की?

5 'शिवराजविजय' का गद्य किस कोटि में आता है?

6 पं. अम्बिकादत्त किस युग के कवि थे?

7 शिवराजविजय की भाषा किस श्रेणी में आती है?

8 शिवराजविजय का अङ्गी रस कौन सा है।

9 शिवराजविजय में किस अलङ्कार का प्रयोग सबसे अधिक हुआ है?

❑❑❑